संजय की कलम से ..

होली का वास्तविक रहस्य

भारत में जितने भी त्योहार मनाये जाते हैं, होली उन सभी से विलक्षण है। इसे लोग खूब हास-परिहास के साथ मनाते हैं। होली के दिन हुड़दंग मचा रहता है और लोग एक-दो को गुलाल-अबीर से रंग डालते हैं तथा रात्रि को होलिका जलाते हैं। आखिर इस त्योहार को इस दिन तथा इस रीति से मनाने के पीछे क्या रहस्य है?

पंडित लोग कहते हैं कि भविष्य पुराण में नारद जी ने राजा युधिष्ठिर से होली के संबंध में जो कथा कही, वह इस प्रकार है –

नारद जी बोले – ''हे नराधिप! फाल्गुन की पूर्णिमा को सब मनुष्यों के लिए अभय दान देना चाहिए जिससे समस्त प्रजा भय-रहित होकर हँसे और क्रीड़ा करे। डंडा और लाठी लेकर बालक शूरवीरों की तरह गाँव के बाहर जाकर होली के लिए लकड़ी और कंडों का संचय करें। उस होलिका-दहन, हास-परिहास, खिलखिलाहट और मंत्र उच्चारण से पापात्मा राक्षसी नष्ट हो जाती है। इस व्रत की व्याख्या से (कहानी अनुसार) हिरण्यकश्यप की बहन अर्थात् प्रह्लाद की बुआ, जो प्रह्लाद को लेकर अग्नि में बैठी थी, प्रतिवर्ष 'होलिका' नाम से आज तक जलाई जाती है। हे राजन्! होलिका-दहन इत्यादि से संपूर्ण अनिष्टों का नाश होता है .....।''

उपरोक्त कथा-सार को पढ़कर बुद्धिमान लोग समझ सकते हैं कि इसका शब्दार्थ लेना युक्ति-संगत नहीं है बल्कि भावार्थ अथवा लक्षणार्थ लेना ही विवेक-सम्मत है क्योंकि केवल लकड़ी और कंडों के दहन से तो सभी अनिष्टों का नाश हो नहीं सकता, न ही कभी ऐसा हुआ है। वास्तव में तो लकड़ी और कंडे, स्वभाव तथा कर्मों में जो दुख देने वाली आदतें हैं, जो कटुता, शुष्कता, क्रूरता तथा विकार रूपी झाड़-झंखाड़ हैं, उनके प्रतीक हैं और अग्नि 'योगाग्नि' का प्रतीक है। अत: बुरे संस्कारों, नास्तिकता तथा अभिमान रूप होलिका इत्यादि को परमात्मा रूप दिव्य अग्नि की पाप-दह शक्ति में होम कर देना अथवा योगाग्नि में भस्म कर देना ही 'होलिका-दहन' है। इससे मनुष्य के मन में हर्ष और आह्लाद होना स्वाभाविक है; इसलिए यह हास-परिहास का त्योहार माना गया है। 'अभय दान' देने का अर्थ भी यही है कि हम हिंसा, क्रोध, द्वेष इत्यादि से वशीभूत होकर व्यवहार न करें जिससे कि हमसे किसी को भय हो। पुनश्च, सोचने की बात है कि लकड़ी और कंडों को जलाने से तो 'पापात्मा राक्षसी' का नाश नहीं होगा न? 'पापात्मा राक्षसी' तो हमारे मन में बैठी हुई आसुरी वृत्तियों तथा पापजनक कर्मों की ही सूचिका है। **अत: हम ज्ञान-रंग से एक-दूसरे को (आत्माओं को) रंगकर, मन के कुभावों तथा कुसंस्कारों का कचरा दग्ध कर दें – यही होली और होलिकोत्सव का वास्तविक रहस्य है।** ❖

अमृत-सूची

◈ सहनशीलता मज़बूती है, मजबूरी नहीं (सम्पादकीय)............ 2
◈ पुरुषोत्तम संगमयुग में.......... 4
◈ मंदी और महंगाई का 6
◈ 'पत्र' संपादक के नाम......... 7
◈ आत्मा के सात मौलिक गुण... 8
◈ मानव मात्र की तीन श्रेणियाँ...10
◈ एक गाय और एक नारी...... 11
◈ हे उन्नति के पथिको..........13
◈ जीवन जीने की कला.........14
◈ जीवन में सच्ची शांति 15
◈ ग्लोबल हॉस्पिटल में सर्जरी कार्यक्रमों की जानकारी......16
◈ धन्य हुआ हमारा जीवन...... 17
◈ गहन अंधकार में फूटी........19
◈ कला में आध्यात्मिकता 20
◈ असत्य से सत्य की ओर.... 22
◈ ज्ञानामृत मेरी प्यारी (कविता). 24
◈ फिर कब बनेंगे लोहे से.......25
◈ बेहतर विश्व के निर्माण का..26
◈ सचित्र सेवा समाचार......... 28
◈ प्रकृति की गोद.............. 30
◈ परमात्म वरदानों से होली (कविता)................ 31
◈ सचित्र सेवा समाचार......... 32

सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	70 /-	1,500/-
वर्ल्ड रिन्युअल	70/-	1,500/-
विदेश		
ज्ञानामृत	700 /-	7,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	700/-	7,000/-

शुल्क केवल '**ज्ञानामृत**' अथवा '**द वर्ल्ड रिन्युअल**' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन-307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें -
09414006904, 09414154383

सम्पादकीय

सहनशीलता मज़बूती है, मजबूरी नहीं

कई लोग समझते हैं कि सहन करना कमज़ोरी और डरपोकपना है। वे यह भी कहते हैं कि बुराई का सामना ना करना भी पाप है अत: जो जिस भावना को लेकर सामने आए, उसे उसी भावना से प्रत्युत्तर दिया जाना चाहिए। प्रेम का उत्तर प्रेम से दो, शत्रुता का उत्तर शत्रुता से दो। वे यह भी कहते हैं कि पहले झगड़ा करो नहीं, और यदि दूसरा झगड़े की शुरूआत करता है तो पीछे रहो भी नहीं।

उपरोक्त कथनों पर हम क्रमवार विचार करेंगे।

क्या सहनशीलता कमज़ोरी और डरपोकपना है?

हम प्रतिदिन के जीवन में देखते हैं कि एक माता अपने बच्चों की हर उचित-अनुचित हरकत को सहन कर लेती है। और उसमें भी बच्चा जितना ज़्यादा छोटा है, उसकी सहनशीलता उसके प्रति उतनी ही ज़्यादा होती है। उसकी गोद में दूध पीता बच्चा कई बार उसके बाल खींच लेता है, आँख में अंगुली डाल देता है, दाँत चुभो देता है, नाक-कान में पहना गहना खींच लेता है और कितनी ही बार उसके साफ-सुथरे कपड़ों को गंदा कर देता है पर माँ खिलखिलाकर यह सब समा जाती है। ज्यों-ज्यों बच्चा बड़ा और समर्थ होता जायेगा, उसके प्रति उसकी सहनशक्ति भले ही थोड़ी कम होती जाएगी परन्तु उस अबोध का, जिसके पास कोई हथियार नहीं, बल नहीं, सब कुछ सह जाती है। यदि बदला लेना चाहे तो माँ क्या नहीं कर सकती पर वह अपनी शक्ति को बदला लेने में नहीं, बल्कि अपने बच्चे को बदलने में लगाती जाती है। तो क्या माँ कमज़ोर है, डरपोक है? नहीं ना! तो फिर क्यों सह जाती है? क्योंकि माँ प्रेम की मूर्त है। **अत: सहन करने वाला दब्बू नहीं बल्कि स्नेही है। स्नेह से लबालब भरे हृदय में, दुर्व्यवहार रूपी फेंकी गई कंकर कहीं गहरे में जा समाती है पर स्नेही के सागर के जल की सतह फिर भी उजली की उजली ही रहती है। शुद्ध स्नेह का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। यह स्नेह किसी संबंध से भी हो सकता है, देश से भी हो सकता है, भगवान से भी हो सकता है।** भारत माता के लिए श्वासों-श्वास न्योछावर करने वाले चंद्रशेखर आज़ाद ने जलती मोमबत्ती पर अंगुली रखकर अपने देश-प्रेम की परीक्षा दी थी और उफ तक भी नहीं की थी। लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल ने किशोरावस्था में शरीर पर निकले फोड़े के इलाज के लिए लोहे की गर्म सलाख उसमें घुसेड़ ली थी। कितने ही रणबांकुरे, दुश्मन की गोलियों के सामने सीना तान कर आगे बढ़ते रहते हैं, ना पीठ दिखाते हैं, ना हार मानते हैं। तो क्या ये सब दब्बू हैं, डरपोक हैं? अगर ये दब्बू हैं तो फिर दुश्मन की गोली को देखते ही भागने वालों को आप क्या कहेंगे? वास्तव में बहादुर वो हैं जो देश-प्रेम की खातिर हँसते-हँसते भूख-प्यास, अभाव, कष्ट और मौत को भी गले लगा लेते हैं पर उफ तक नहीं करते।

देश की खातिर घास की रोटी चबाने वाले महाराणा प्रताप क्या कमज़ोर थे, डरपोक थे? नहीं, वे बहादुर थे जिनके लिए देश पहले था और क्षुधापूर्ति बाद में। कितने ही उदाहरण और भी दिए जा सकते हैं जो इस भ्रांति को निर्मूल करते हैं कि सहन करने वाले कमज़ोर होते हैं।

जिस प्रकार देश-प्रेम की धधकती ज़्वाला में अनगिनत लोगों ने अपने सुख-चैन, धन-संपत्ति, संबंध और शरीर तक की आहुति दे डाली, इसी प्रकार प्रभु के प्रति प्रेम में भी कई हँसते-हँसते कष्टों को सहते रहे। धर्म की खातिर शीश देने वालों में सिख इतिहास का पन्ना-पन्ना भरा पड़ा है। वे डरपोक होते तो अपने विरोधियों के आगे गिड़गिड़ाकर जीवन की रक्षा कर सकते थे परन्तु सच्चे बहादुर जीवन से ज्यादा स्वमान को, मूल्यों को महत्त्व देते हैं। उनका नारा होता है, 'प्राण जाये पर स्वमान न जाये'। मीरा भी प्रभु-प्रेम में ज़हर का प्याला हँसते-हँसते पी गई। पिताश्री प्रजापिता ब्रह्मा बाबा भी ग्लानि करने वालों, गाली देने वालों, विरोधियों और मारने का कुप्रयास करने वालों को भी क्षमा-दान दे गले लगाते रहे। उनकी सहनशीलता ने आज लाखों विरोधियों को उनका प्रशंसक बना दिया है। आज भी कई सच्चे भक्त, अपने भरे-भराए घर में भी, इष्ट के प्रति प्रेमवश उपवास करके भूख-प्यास सब सहन करते हैं। उनके सामने रोटी ना होने की मजबूरी नहीं है

पर प्रेम ने उनको मज़बूत बना दिया है। इसके विपरीत आपने ऐसे लोग भी देखे होंगे जो भोजन में एक मिनट की देरी होने पर घर को कबाड़ी घर बना देते हैं। **अतः सारांश यही है कि सहन करने वाला स्नेहमूर्त, कल्याणमूर्त, दृढ़तामूर्त, सद्गुणमूर्त, शांतमूर्त और शक्तिमूर्त होता है। कमज़ोर या डरपोक से तो सहनशीलता वैसे ही कोसों दूर है जैसे किसी पाप कर्म करने वाले से पुण्य कोसों दूर होता है।**

क्या शत्रुता का उत्तर शत्रुता से दें?

कई लोग सवाल पूछते हैं कि यदि कोई हमारे शरीर, संपत्ति, संबंध को अकारण ही हानि पहुँचाता रहे तो क्या हम चुपचाप देखते रहें? यदि चुपचाप देखते रहेंगे तो क्या कायर नहीं कहलाएंगे? ठीक है, सामना करें परन्तु मान लो सामने कीचड़ पड़ा है तो क्या हम सीधा उसमें पत्थर फेंक देंगे। ऐसा करने से कीचड़ का कुछ नहीं बिगड़ेगा पर हमारा तो सब कुछ ही बिगड़ जायेगा। अतः कीचड़ को हटाने की तरकीब चाहिए, इसी प्रकार बुराई को जीतने के लिए भी समझ, तरकीब, युक्ति चाहिए। मान लो, धन हड़पने के लिए चोर घर में घुस आया। अब एक तरफ वो चोर है जिसके जीवन का उद्देश्य मारना और मरना है। वह जान हथेली पर लेकर लोगों के घरों में घुसता है। उसका जीवन लोगों का धन हड़पने के लिए समर्पित है, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह पाप की किसी भी सीमा तक बढ़ सकता है। परन्तु क्या हमारा जीवन भी उसकी तरह तुच्छ है? क्या हमारे सामने भी मारने-मरने के अलावा कोई सार्थक उद्देश्य नहीं है? क्या हम भी उसकी तरह जीवन को इतना सस्ता समझते हैं कि उसे हथेली पर लिए घूमते हैं और एक चोर के अवगुणों की भेंट उसे चढ़ा देते हैं? नहीं, ऐसी स्थिति में भी हमें उत्तेजना, क्रोध और बदला या हिंसा से काम न लेकर युक्ति और धैर्य से काम लेना है। उस दुष्ट का सामना करने में मर जाना कोई बहादुरी नहीं है बल्कि युक्ति से अपना जीवन बचा लेना और उसे भी जीवित पकड़ लेने में बहादुरी है। इन दोनों कार्यों के लिए सही समय पर, सही निर्णय शक्ति चाहिए। और सही निर्णय शक्ति शांत, शीतल, मननशील विवेक की उपज है। क्रोध और उत्तेजना में लिया गया निर्णय तो धन-हानि के साथ-साथ जीवन-हानि को भी निमंत्रण दे सकता है। चोर की मृत्यु से समाज को हानि नहीं है पर आपकी मृत्यु से अपूरणीय क्षति होगी। आपके द्वारा किए जाने वाले अच्छे कार्य अधूरे रह जायेंगे। अतः ऐसे शत्रु को धैर्य और युक्ति से जीतो। यदि हम क्रोधित हो गए तो उसकी जीत निश्चित है। कुछ समय पहले, भारत से बाहर एक देश में एक ब्रह्माकुमारीज़ सेवाकेन्द्र पर एक समाज विरोधी तत्व घुस गया। उसने बंदूक का भय दिखाकर सेवाकेन्द्र की बहनों से धन देने को कहा। बहनों ने शांतिपूर्वक, बिना भयभीत हुए उसे योग-कक्ष में रखा दान-पात्र उठाकर दे दिया। वह चला तो गया पर अपने स्थान पर जाकर जब उसे तोड़कर धन निकालने लगा तो अन्तरात्मा चीत्कार कर उठी और वह पात्र लेकर पुनः सेवाकेन्द्र पर आया। बहनों के चरणों में उसे रख बहुत रोया। यह थी बहनों की युक्ति और शुभभावना जिस कारण वे साफ-साफ बच गईं। यह फल है राजयोग द्वारा प्राप्त दिव्य विवेक से लिए गए सही समय के, सही निर्णय का।

प्रथम दृष्टि में, ईंट के बदले पत्थर फेंक देना सरल भी लगता है और उचित भी परन्तु इसका परिणाम न सुलझने वाली आपराधिक कड़ी के रूप में हमारे सामने आता है। यदि सामने आती गोली को देखकर हम थोड़ा झुक जाते हैं तो यह कायरता नहीं बल्कि बहादुरी और सूझ है।

यदि कोई व्यक्ति गलत कर्मवश, डरकर, दबकर, किसी स्वार्थ की पूर्ति का लक्ष्य लेकर, दिखावा मात्र, वाहवाही लूटने अर्थ कुछ झेल रहा है तो वह सहनशीलता नहीं। जब बीज असली नहीं तो फल असली कहाँ से निकलेगा। स्वार्थवश, मजबूरीवश या चढ़े हुए कर्ज़वश झेलने वाले लोग ही सहनशीलता को बदनाम करते हैं और कहते हैं, इतना करने के बाद भी हमें तो कुछ भी नहीं मिला। **यदि प्रेमपूर्ण हृदय सागर में, रहम का इत्र डालकर, शुभभावनाओं की पिचकारी से छिड़काव करते हुए कुछ सहन किया जाए तो यह भी शहंशाह बनने जैसा, सबके दिलों पर राज करने जैसा और प्रभु के दिलतख्त पर बैठने जैसा ही है। वास्तव में सहना ही सोने का गहना है।**

– ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश

पुरुषोत्तम संगमयुग में लौकिक और अलौकिक ताजपोशी

• ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

वर्तमान संगम समय में दुनिया के लगभग सभी देशों में गणतंत्र प्रथा है जिसमें प्रजा प्रतिनिधियों का चुनाव करती है और वे राष्ट्रप्रमुख, प्रधानमंत्री आदि-आदि पदों के लिए चुने जाते हैं। बाद में उनकी ताजपोशी शपथ ग्रहण विधि के रूप में होती है। अमेरिका के राष्ट्रप्रमुख के रूप में अभी-अभी बहुचर्चित बराक ओबामा की वाशिंगटन में ताजपोशी हुई। उसे देखने के लिए वाशिंगटन में 20 लाख लोग इकट्ठे हुए, करोड़ों लोगों ने इस कार्यक्रम को टेलिविजन पर देखा। इसका खर्च हुआ 17 करोड़ डॉलर अर्थात् 770 करोड़ रुपये। उनसे पहले, भ्राता जॉर्ज बुश के राष्ट्रप्रमुख के रूप में शपथ ग्रहण समारोह का खर्च 4.20 करोड़ डॉलर अर्थात् 211 करोड़ रुपये हुआ। भ्राता बिल क्लिंटन के शपथ ग्रहण समारोह का खर्च 3.3 करोड़ डॉलर अर्थात् 167 करोड़ रुपये था।

आतंकवाद के इस दौर में उक्त शपथ ग्रहण समारोह की सुरक्षा व्यवस्था के ऊपर ही 400 करोड़ रुपये का खर्च हो गया। दर्शकों की जाँच मेटल डिटेक्टर (Metal Detector) के द्वारा हुई। किसी को भी अपने साथ किसी भी प्रकार के शस्त्र ले जाने की तो मना थी ही, यहाँ तक कि छाता या हाथ में लकड़ी आदि भी ले जाने नहीं दिया गया। शपथ ग्रहण समारोह की टिकटों का कालाबाज़ार किया गया और उनके असली दाम से 20 से 50 गुणा तक ज़्यादा पैसे लिए गये। चूंकि पहला अश्वेत व्यक्ति राष्ट्रप्रमुख बन रहा था इसलिए अमेरिका की अश्वेत प्रजा ने भारी संख्या में इस कार्यक्रम में भाग लिया।

ओबामा की यह शपथ ग्रहण विधि वहाँ के समय मुताबिक 12.30 बजे पूरी हुई। इसके बाद पूर्व राष्ट्रप्रमुख भ्राता जॉर्ज बुश विदाई लेकर अपने स्थान टेक्सास वापिस गए। ओबामा और उनके मंत्रिमंडल ने अपना स्थान ग्रहण करके राज्य कारोबार शुरू किया। यह था सबसे खर्चीली लौकिक ताजपोशी का शब्दचित्र।

उसकी भेंट में इस दैवी परिवार में भी कारोबार में नियुक्तियाँ होती रहती हैं। सबसे पहले आदरणीया मातेश्वरी जी को संस्था की मुखिया के रूप में ब्रह्मा बाबा ने नियुक्त किया। प्यारी मातेश्वरी जी ने सन् 1965 में देह त्याग किया और बाद में साकार ब्रह्मा बाबा ने 1 अप्रैल 1966 की मुरली के आखिरी आधे पेज पर स्वहस्तों की लिखत से दादी प्रकाशमणि जी की मुख्य संचालिका के रूप में तथा दीदी मनमोहिनी जी की अतिरिक्त मुख्य संचालिका के रूप में नियुक्ति की घोषणा की। इसके बाद 18 जनवरी, 1969 रात्रि के करीब सवा आठ बजे ब्रह्मा बाबा, दादी प्रकाशमणि जी के हाथों में हाथ रखकर खुद अव्यक्त हो गये। इसी को अव्यक्त बाबा ने कहा है कि बाबा ने बच्ची के हाथों में विल पावर की विल की। ब्रह्मा बाबा के पार्थिव शरीर के अग्नि संस्कार के बाद बापदादा ने 21 जनवरी, 1969 को प्रथम अव्यक्त मुरली के अंत में दीदी-दादी दोनों के सिर पर गुलाब का फूल रखकर प्रतीकात्मक ताजपोशी कर यज्ञ कारोबार के निमित्त बनाया जिसको उस समय उपस्थित सभी भाई-बहनों ने देखा। यह नि:शुल्क अलौकिक ताजपोशी थी जिसमें सादगी के साथ ईश्वरीय शक्ति और ज़िम्मेवारी प्रदान करने की गई।

उसके बाद माउंट आबू में विश्व नव निर्माण आध्यात्मिक संग्रहालय के निर्माण का कार्य शुरू हुआ। हम सब सोच रहे थे कि सतयुग का नज़ारा मॉडल के रूप में इस संग्रहालय में कैसे दिखाया जाये। जब अव्यक्त बापदादा की पधरामणि हुई तो हम सबने पूछा कि सतयुग के मॉडल में हम क्या दिखाएँ। अव्यक्त बापदादा ने बताया कि सतयुग में लक्ष्मी-नारायण द्वितीय की ताजपोशी प्रथम लक्ष्मी-नारायण के हाथों से कैसे होती है, यह दिखाना ज़रूरी है जिससे सबको मालूम पड़े कि कैसे वहाँ राज्य-सत्ता का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरण होता है और इस कार्यक्रम की विधि कैसी

सात्विक होती है। हमने इस बारे में विशेष जानकारी चाही तो अव्यक्त बापदादा ने कहा कि प्रथम लक्ष्मी-नारायण खुद अवकाश प्राप्त करके, जीते जी ही अपने युवराज को राजगद्दी पर विश्व महाराजन के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं और फिर स्वयं भी समय प्रति समय राज्य कारोबार में मार्गदर्शन करके द्वितीय लक्ष्मी-नारायण के राज्य को अटल-अखण्ड-निर्विघ्न चलाने में मदद करते हैं। इसी परंपरा के आधार पर सतयुग में राज्य कारोबार अटल-अखण्ड और निर्विघ्न चलता है। हम सबने और खास भ्राता निर्वैर जी ने मेहनत करके सतयुगी द्वितीय लक्ष्मी-नारायण की ताजपोशी के दृश्य का मॉडल के रूप में निर्माण कराया और मैं समझता हूँ कि आप सबने आबू का संग्रहालय अवश्य ही देखा होगा।

कलियुग और सतयुग की ताजपोशी में कितना महान अंतर है। अमेरिका में चुनाव जीतने के कारण मिलने वाली राजसत्ता चलती है ज़्यादा से ज़्यादा 4 वर्ष। इसके बाद अगर वही व्यक्ति पुन: जीत जाए तो अगले 4 वर्ष के लिए सत्तानशीन हो सकता है। इस प्रकार लगातार 8 वर्ष सेवा करने के बाद वही व्यक्ति तीसरी बार राष्ट्रप्रमुख के रूप में सत्तानशीन नहीं हो सकता। जब अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति फ्रेंकलिन रूजवेल्ट तीसरी बार चुनकर आये तो वहाँ की संसद ने कानून पास कर दिया कि कोई भी व्यक्ति दो बार से ज़्यादा राष्ट्रप्रमुख नहीं बन सकता। भारत जैसे देशों में चुनाव द्वारा प्राप्त सत्ता ज़्यादा से ज़्यादा 5 वर्ष तक चल सकती है, अगले 5 वर्ष के लिए भी वही व्यक्ति राष्ट्रप्रमुख या प्रधानमंत्री के रूप में पुनः चुना जा सकता है। वर्तमान समय इंग्लैंड, हालैण्ड तथा कुछेक अन्य देशों में राजवंश परंपरा चलती है, ज़्यादातर देशों में यह सिद्धांत नहीं चलता है। नेपाल में भी, पिछले वर्ष, राजा को अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा। ब्रह्मा बाबा ने भी साकार मुरली में कहा है, आजकल के राष्ट्रप्रमुख की सत्ता का कोई भरोसा नहीं, वह अगर अन्य देश में जाता है तो इतने में ही उसके पीछे लोग उसे पदभ्रष्ट कर देते हैं। मुझे याद है, इस साकार मुरली के चलने के तीसरे दिन इजिप्त राष्ट्रप्रमुख जब जापान के दौरे पर गए थे तब इजिप्त के लोगों ने और वहाँ के मंत्रिमंडल ने उनको निर्वासित कर दिया था और दूसरे व्यक्ति को राष्ट्रप्रमुख बनाकर उसकी ताजपोशी कर दी थी। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रप्रमुखों, अब्राहम लिंकन तथा जॉन कैनेडी की हत्या हो गई थी और वर्तमान समय भ्राता ओबामा ताजपोशी के समय पर जो कपड़े पहनकर आए थे, वे बुलेटप्रूफ थे। उनकी कार को भी बुलेटप्रूफ किया गया था। आजकल की दुनिया में तो ताजपोशी कांटों का ताज है, न कि सुख और शांति का ताज।

ईसाई धर्म में पोप की ताजपोशी होती है। पहली ताजपोशी ईसा मसीह ने, स्वयं को क्रॉस पर चढ़ाए जाने के एक रात पहले की थी। उस दिन उन्होंने अपने साथियों का भोज समारोह रखा था और ऐसा माना जाता है कि इस भोज समारोह में, ईसा मसीह ने चमत्कार के द्वारा, अपने पास केवल दो डबलरोटी और पाँच मछलियाँ होते हुए भी, सबको पेट भर कर भोजन कराया था। बाद में उन्होंने अपने एक शिष्य, जिसका नाम सेंट पीटर था, को बुलाकर एक सोने की और दूसरी चाँदी की – दो चाबियाँ दीं और कहा कि मेरे बाद तुम ईसाई धर्म के प्रचार और धर्म की सुरक्षा के लिए ज़िम्मेवार होंगे और तुम्हारी परंपरा पोप के रूप में ही प्रसिद्ध होगी। आज भी रोम के वेटिकन म्यूज़ियम में सेंट पीटर की ताजपोशी का सुंदर चित्र रखा हुआ है।

ईश्वरीय ज्ञान के मुताबिक, विश्व महाराजन और विश्व महारानी के रूप में ताजपोशी की प्राप्ति हो तथा राजपरिवार में जन्म मिले, ऐसा पुरुषार्थ हम सभी करना चाहते हैं। शिव बाबा ने हम बच्चों को बताया है कि पहला विश्व महाराजा और विश्व महारानी हमारे प्यारे ब्रह्मा बाबा और मातेश्वरी सरस्वती बनेंगे। सतयुगी ताजपोशी के लायक बनने के लिए तीन मापदण्ड भी हमें बताए हैं – 1. स्वपसंद 2. प्रभुपसंद 3. लोकपसंद। ईश्वरीय परिवार भी एक प्रकार का प्रजातंत्र ही है क्योंकि हम सबको भी अपना विश्व महाराजा और विश्व महारानी चुनने का अर्थात् लोकपसंद के आधार पर गुप्त रूप से मतदान करके श्री लक्ष्मी-श्री नारायण के रूप में योग्य अधिकारी की नियुक्ति करने का सौभाग्य मिलता है।

❖

मंदी और महंगाई का वैश्विक संकट

• ब्रह्माकुमार सुभाष नंदी, मुलुंड (मुंबई)

वर्तमान समय सभी समस्याएँ तीव्र गति से अति में जा रही हैं। अति के बाद अंत निश्चित है। मनुष्यों के स्वभाव-संस्कार में नैतिक मूल्यों के ह्रास एवं चरित्र के पतन के भयानक समाचार सुनने को मिल रहे हैं। धर्म भ्रष्ट, कर्म भ्रष्ट, मूल्यहीन मानव भेद-भाव, ईर्ष्या-द्वेष व स्वार्थ के कारण मार-काट कर रहा है, दूसरों का खून चूस रहा है। चारों ओर पापाचार, भ्रष्टाचार है। दिनों-दिन महंगाई अत्यधिक बढ़ती जा रही है। आतंकवाद के संकट के कारण पूरे विश्व के मानव त्रस्त व भयभीत हैं, हर एक का दम घुट रहा है। ग्लोबल वार्मिंग तथा जलवायु के प्राकृतिक परिवर्तन के कारण पूरे विश्व एवं खास भारत में पीने के पानी, बिजली तथा अन्न के उत्पादन में कमी हो गई है और आर्थिक संकट बढ़ गया है। समस्त मानव जाति एवं पशु-पक्षियों का जीवन खतरे में आ गया है। राज्य-सत्ता, धर्म-सत्ता तथा समाज का हर क्षेत्र आज नियंत्रण के बाहर होता जा रहा है। विश्व के पाँचों महाखण्डों के वैज्ञानिक, शास्त्रज्ञ, राज्यकर्त्ता, शिक्षाविद् तथा आम जनता सभी का एक ही प्रश्न है कि अब दुनिया का क्या होगा? ऐसे में हम ब्रह्मावत्सों का कर्त्तव्य है, 'गोल्डन दुनिया अब आने ही वाली है' खुशी की यह खबर सुनाकर भयभीत आत्माओं को खुशी की अनुभूति कराना।

आलस्य मनुष्यों का महाशत्रु है जो पुरुषार्थ में बाधक है। कहावत भी है,

'कल करे सो आज कर,
आज करे सो अब।
पल में प्रलय हो जायेगा,
बहुरी करेगा कब?'

ध्यान रहे कि समय को बरबाद करना अर्थात् अपने ही जीवन को बरबाद करना।

भगवान कहते हैं, बच्चे, दो रोटी खाओ और प्रभु के गुण गाओ परंतु अभी भी कई लोग, लोभ-लालच के वश विनाशी धन के पीछे दिन-रात दौड़ रहे हैं। अंत में परिस्थिति ऐसी आयेगी जो धन-दौलत किसी का मिट्टी में दब जायेगा, किसी का चोर लूट लेंगे या सरकार कब्जा कर लेगी। सफल उसी का होगा जो ईश्वर अर्थ लगाएगा। बुद्धिवान व्यक्ति धन को ईश्वरीय कार्य में लगाकर सतयुगी दैवी स्वराज्य का श्रेष्ठ राज्य-भाग्य प्राप्त करने का अधिकारी बनेगा।

संयुक्त राष्ट्र के अन्न एवं कृषि विभाग के बयान अनुसार मंदी एवं प्राकृतिक परिवर्तन के कारण उत्पादन में कमी से विश्व के करीब 36 देश अन्न-धान्य के अभाव से भीषण परेशान हैं, धन होते हुए भी वर्तमान विश्व के बाजार में अन्न-धान्य उपलब्ध नहीं है। चारों तरफ हाहाकार मच रहा है। पड़ोसी बांग्ला देश, धन-धान्य वसुंधरा के नाम से प्रख्यात है परंतु वर्तमान समय वहाँ उत्पादन में कमी एवं दाल-चावल के दाम बढ़ जाने से हाहाकार मचा है। विश्व के प्राय:सभी देशों की सरकारों को अब यह डर है कि अगर जनता को खाने के लिये अन्न-धान्य नहीं दे सके तो लोगों के पेट की आग सरकार को खा जायेगी। अब समय है जन-जन को बाप का पैगाम पहुँचाने का।

फाइनल पेपर के पहले सदा यही अटेन्शन रहे कि देह और देह के संबंध, स्वभाव-संस्कार, व्यक्ति, वैभव तथा दुनियावी वायुमंडल कोई भी अपनी तरफ आकर्षित न करे। नष्टोमोहा स्मृतिलब्धा बन 'मेरा तो एक बाप दूसरा न कोई' यही महामंत्र पक्का करना है । कैसी भी परिस्थिति आये पर हमें स्वयं अचल-अडोल रहते, सभी से न्यारे बन एक बाप के प्यार में लवलीन हो जाना है। सबसे अमूल्य श्रेष्ठ खज़ाना है पुरुषोत्तम संगम युग का समय और संकल्प क्योंकि इस समय ही हम सारे कल्प की प्रालब्ध बना सकते हैं। इस समय के लिए ही गायन है, अब नहीं तो कब नहीं।

चंद्रमणि दादी, दादी जी, मनोहर दादी अचानक अव्यक्त हो गई। यह भी समय की समीपता के सूचक नज़ारे हैं। अत: विनाश का नगाड़ा बजने से पहले ही हम ब्रह्मावत्सों को श्रीमत प्रमाण श्रेष्ठ धारणामूर्त बन हर आत्मा को संतुष्ट करते हुए बाप को प्रत्यक्ष करना है, तब ही हाहाकार के साथ-साथ जय-जयकार की भी आवाज़ सारे विश्व में गूंज उठेगी, नहीं तो अंत में धर्मराज के आगे पश्चाताप करते, हाथ मलते हुए रह जायेंगे। ❖

‘पत्र’ संपादक के नाम

प्रश्न : मेरी आयु 18 वर्ष है। घर वाले मुझे 60 वर्ष की आयु के बाद ज्ञान में चलने को कह रहे हैं, क्या करूँ?

– श्रवण सुथार,
सांचोर (राज.)

उत्तर : लोग ज्ञान-ध्यान को वृद्धावस्था में किया जाने वाला कर्म मानते हैं। परन्तु वर्तमान समय में, बुढ़ापे के सारे काम जवानी में ही होने लगे हैं, उदाहरण के लिए, पहले बाल सफेद बुढ़ापे में होते थे, आजकल तो 35-40 वर्ष की उम्र में सफेदी आनी शुरू हो जाती है। कुछ को 20-30 वर्ष की आयु या इससे भी कम आयु में सफेदी आ जाती है। इसी प्रकार हृदयाघात, मधुमेह, बी.पी., कैंसर, कमर दर्द, घुटने का दर्द, दृष्टि दोष, बहरापन, दाँतों की खराबी, अपच, बवासीर आदि सभी रोग जवानी में ही आ धमकते हैं। प्रश्न यह है कि हमने रोगों के लिए बुढ़ापे का इंतज़ार क्यों नहीं किया? यदि बुढ़ापे में होने वाले रोग जवानी में हो सकते हैं तो क्या बुढ़ापे में सीखा जाने वाला ईश्वरीय ज्ञान जवानी में नहीं सीखा जा सकता? आजकल अकाल मृत्यु का बाज़ार सर्वत्र गर्म है। प्रश्न है कि संसार के कितने लोग 60 वर्ष की आयु तक पहुँच पाते हैं? यदि जेब में 60 वर्ष तक जीने का लाइसेंस हो तो भले ही ज्ञान-ध्यान को तब तक टाला जा सकता है। आप अपने परिवार वालों से यह लाइसेंस मांग लीजिए। जिस असुरक्षित समाज में अगले क्षण के श्वास की गारंटी नहीं, वहाँ करोड़ों क्षणों से बनी 60 साल की अवधि का इंतज़ार कितना हास्यास्पद है!

ईश्वरीय ज्ञान से मानव को कर्मों की गहन गति का ज्ञान हो जाता है। संसार में कर्म करने का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण समय 18 वर्ष की आयु से प्रारंभ होता है। इस उम्र में ईश्वरीय ज्ञान सीखकर हम कर्मों को महान बना सकते हैं जिससे वृद्धावस्था भी हँसी-खुशी से पार हो जाती है। बिना ज्ञान के, युवावस्था से ही समय, शक्ति, धन और इंद्रियों की बरबादी चालू हो जाने के कारण बुढ़ापे तक व्यक्ति खाली-खोखला हो जाता है। परिणामस्वरूप, वृद्धावस्था कष्टों का आगार बन जाती है। जवानी की नेक कमाई, ज्ञान-ध्यान, चरित्र की कमाई, पुण्यों और दुआओं की कमाई ही बुढ़ापे को सुखी बनाती है।

आजकल अधिकतर लोग 20 वर्ष से भी कम आयु में व्यसनों के अधीन हो जाते हैं, उन्हें तो कोई नहीं कहता कि अभी आपकी उम्र इस ज़हर को खाने की नहीं है। पर ज्ञान सीखने में उम्र का राग अलापा जाता है। इसका मतलब यही हुआ कि ज़हर तो चाहे घुट्टी के साथ भी पिला दिया जाए तो लोगों की तरफ से उसकी भी छुट्टी है पर ज्ञान अमृत पीने की छुट्टी 60 वर्ष के बाद ही मिलेगी। समाज के इसी रुख के कारण आज गली-मोहल्ले व्यसनियों से अटे पड़े हैं क्योंकि उन पर उम्र की कोई पाबंदी नहीं है। परन्तु सच्चे ज्ञानी ढूँढ़े भी नहीं मिलते क्योंकि उन पर 60 साल तक पहुँचने की पाबंदी है। यदि समाज इसे उलट देता अर्थात् ज्ञान लेने पर रोक न होती और व्यसनों या बुराई के लिए उम्र की या अन्य कड़ी पाबंदियाँ होती तो आज समाज में ज्ञानीजनों की भरमार होती और पाप कर्मों की संख्या घट जाती।

समाज के इस उलटे रुख को सीधा करने के लिए ही भगवान ने बच्चे से बूढ़े तक सभी का ज्ञान-मार्ग पर चलने के लिए आह्वान किया है। अगर आप ने उनके आह्वान को समझ लिया है तो दृढ़ रहिए। दृढ़ता के आगे सभी विरोध हार जाते हैं।

दिसंबर, 2008 के अंक में ‘कुएँ से निकल सागर की ओर’ लेख पढ़ा। पढ़ने से आशा उत्पन्न हुई कि इस लेख से आज के नौजवान भाई-बहनों का कल्याण हो सकता है। इस को पढ़ने से कई तरह की जागरूकता आयेगी। हम लेखिका बहन का बहुत-बहुत धन्यवाद करते हैं। ऐसे लेख बार-बार लिखते रहेंगे तो पढ़ने वालों का अवश्य ही कल्याण होगा। इस लेख को पढ़ने से दुर्गन्ध भरे प्रेम प्रसंगों से बच जायेंगे और समाज में सुधार आयेगा

– हरिनारायण,
वैशाली नगर (जयपुर)

आत्मा के सात मौलिक गुण

• ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

आत्मा में सात मौलिक गुण हैं – ज्ञान, पवित्रता, शान्ति, प्रेम, सुख, आनन्द व शक्ति। इन गुणों की अभिव्यक्ति सतयुग में शत-प्रतिशत होती है तो कलियुग में ये प्राय:लोप हो जाते हैं। किसी भी वस्तु के अस्तित्व का पता तभी चलता है जब मन के चैतन्य प्रकाश से वह प्रकाशित हो। यदि मन के संज्ञान में यह बात ही नहीं है कि कार में पीछे रखी स्टेपनी (टायर) में पंक्चर है, तो कोई उसे ठीक कराने की नहीं सोचेगा। उसी प्रकार यदि यह पता ही नहीं हो कि आत्मा में कौन-कौन से गुण हैं, तो कोई उनके विकास के बारे में सोचेगा ही नहीं। इन गुणों का ज्ञान होना, इनकी अभिव्यक्ति में सहायक होता है। जब इन गुणों के स्वरूप पर कोई विचार करता है, तो उसे यह भी पता चलता है कि उसमें ये गुण कहाँ तक क्रियाशील हैं और कैसे इन्हें कर्म में धारण किया जाये। **जैसे यदि कोई अक्सर अशांत रहता है और उसे यह पता चल जाये अथवा समझ में आ जाये कि शांति आत्मा का स्वधर्म है तो वह अपनी अशान्ति के लिये दूसरों को दोष देना कम कर देगा। इसके विपरीत, विकारों के स्वरूप का ज्ञान होना, इन्हें त्यागने में सहायक होता है। जैसे कि यदि किसी क्रोधी को यह ज्ञान कराया जाये कि तुम्हारा यह क्रोध, पाँच विकारों में दूसरा स्थान रखता है और इससे तुम्हारा स्वास्थ्य तो खराब होता ही है, साथ में दूसरों से संबंध भी खराब होते हैं और यह बात उसे समझ में आ जाये, तो वह 'मेरा स्वभाव ही ऐसा है', 'मेरी आदत ही ऐसी है', ऐसे कहना बंद कर देगा। वह क्रोध को त्यागने का प्रयास करेगा।** आइये, क्रमवार इन सातों गुणों का चिन्तन करें –

ज्ञान – ज्ञान के दो रूप हैं – विज्ञान और आध्यात्मिक ज्ञान। इन दोनों की ही उत्पत्ति शांति की शक्ति से होती है। मनुष्य जब एकांत में मन की एकाग्रता को स्थूल पदार्थों पर केंद्रित करते हैं तो विज्ञान के रहस्य खुलते हैं और नये-नये आविष्कार सामने आते हैं। परंतु जब मन को एकांत में अन्तर्जगत व सूक्ष्म शक्तियों की तरफ मोड़ा जाता है, तो आध्यात्मिक चेतना व आत्मिक अस्तित्व का ज्ञान होता है। विज्ञान चूँकि मनुष्य को देह व देह के पदार्थों व भोग-विलास के साधनों की तरफ ले जाता है और आत्मा की निज सत्ता से दूर करता है, अत: इसे 'रावण का वैभव' कहा जा सकता है। आध्यात्मिक ज्ञान चूँकि मनुष्य को उसके आदि मौलिक स्वरूप का बोध कराता है और परमात्मा के करीब लाता है अत: इसे 'राम या भगवान का सौरभ (सुगंध)' कहा जा सकता है। फिर जब कलियुग के अंत में, संगमयुग पर स्वयं परमात्मा शिव, ब्रह्मा के तन का आधार लेकर भाग्यशाली मनुष्यों की आत्माओं को 'अमृत-तुल्य-सत्य-ज्ञान' से सुगंधमय बनाते हैं, तो उनमें आदि-मौलिक गुण इमर्ज हो जाते हैं। ये गुण ही वर्तमान में चल रहे आध्यात्मिक पुरुषार्थ को आधार प्रदान कर आगामी सतयुगी सृष्टि की प्रालब्ध बनाते हैं। 'ज्ञान' रूपी मौलिक गुण आत्मा के यथार्थ स्वरूप का एवं परमपिता शिव के स्वरूप का बोध कराता है, सृष्टि-चक्र व आत्मा के 84 जन्मों का ज्ञान कराता है, विकारों से मुक्त होने व दिव्य गुणों से सुसज्जित होने की विधि का ज्ञान कराता है, कलियुग में रहते अतींद्रिय सुख में रहने का ज्ञान कराता है।

पवित्रता – आत्मा का दूसरा मौलिक गुण है पवित्रता। इसे दूसरे शब्दों में आत्मिक स्वच्छता भी कहा जा सकता है। आदिकाल सतयुग में आत्मा देहभान, अहंकार, परकाया आकर्षण आदि से मुक्त थी। स्वच्छता से संकल्पों में एकाग्रता व दृष्टि में शक्ति आती है। सात्विक, एकाग्र संकल्प व दृष्टि की 'शीतल-शक्ति' का योग मनुष्यों को बिना विकार में गये संतान प्राप्त करा देता था अर्थात् 'योग बल' से संतान प्राप्त होती थी, न कि 'भोग बल' से। परंतु समय के साथ 'पवित्रता' का गुण अपनी शक्ति खोता गया और द्वापर युग से संतान की पैदाइश, भोग-बल से होने लगी।

आत्मा के मौलिक गुणों का अस्तित्व कभी समाप्त नहीं होता बल्कि उनकी शक्ति जन्म दर जन्म क्षीण होते-होते कलियुग के अंत में बिल्कुल निष्प्रभावी हो जाती है।

शान्ति – शांति का गुण शरीर की इंद्रियों को अनुशासन में रख कर आत्मा को 'स्व-दर्शन' में रहने का मौका देता रहता है। यह गुण ना तो भूतकाल की अनुपयोगी बातों में संकल्प को विचरण करने देता है और न ही भविष्य के प्रति डर, भय, चिन्ता करने की इज़ाज़त ही देता है। यह गुण तो आत्मा को साक्षी भाव से द्रष्टा बन, वर्तमान में रहने को प्रेरित करता है। **मनुष्य अशांति में आता ही तब है जब वह वर्तमान में नहीं रहता। शान्ति के गुण वाला मनुष्य किसी भी अशान्त मनुष्य को प्रेम, दया, सहानुभूति से शांत कर सकता है क्योंकि यह गुण उस अशांत मनुष्य को वर्तमान में ले आता है और वर्तमान में आकर ही मनुष्य शांति प्राप्त कर सकता है।**

प्रेम – आत्मा शरीर धारण कर अन्य देहधारियों से संबंध-संपर्क में आती है अत: संबंधों में मिठास हेतु प्रेम का गुण आवश्यक है। फिर जब संबंधी ही उसे दुख देने लगते हैं तो उसका प्रेम देहधारियों से निकल कर प्रेम के सागर परमात्मा से जुड़ जाता है। मनुष्य स्वभाव से या आत्मिक रूप में है ही शांत स्वरूप अत: उन शांति के क्षणों में प्रेम-भाव का होना आवश्यक है अन्यथा दुख, घृणा, ईर्ष्या जैसी मन:स्थिति से शांति में टिका नहीं जा सकता है। इस प्रकार प्रेम का गुण शांति के गुण का सहयोगी है।

सुख – आत्मा का पाँचवां मौलिक गुण है सुख। आज दुख का साम्राज्य सर्वत्र फैला पड़ा है। दुख बाँटने से कम हो जाता है और सुख बाँटने से दुगना हो जाता है परंतु आज दुख में साथ खड़े होने को कोई तैयार नहीं है और सुख में हिस्सेदारी करने को अनेक हैं। मोटे तौर पर इस समय विश्व में 80 प्रतिशत मनुष्य अभावग्रस्त व दुखी हैं। परंतु वे दुख में जीने के इतने आदी हो गये हैं कि सुखमय जीवन प्राप्त करने हेतु कोई सार्थक प्रयास ही नहीं करते। वे आहार, निद्रा, भय व मैथुन, जो पशुओं के धर्म बतलाये गये हैं, उन्हीं में उलझ कर इस दुर्लभ जीवन को नष्ट कर देते हैं। अठारह प्रतिशत मनुष्य कोई आवश्यक कमी न होते हुए भी सुख-दुख के झूले में झूलते रहते हैं। वे स्थायी सुख चाहते तो हैं, परंतु उसे या तो धार्मिक मार्ग द्वारा या फिर नैतिक-अनैतिक किसी भी कर्म से प्राप्त करने को प्रयासरत रहते हैं। बचे हुए 2 प्रतिशत मनुष्य भौतिक सुख की अति में रहते हुए व खुद को सुखी मानते हुए भी मानसिक तौर पर दुखी, अशांत हैं। उन्हें यह भी नहीं पता है कि वे वास्तव में एक भुलावे का अस्वाभाविक जीवन जी रहे हैं। अगर इन सभी प्रकार के मनुष्यों को आत्मा के सुख के गुण की समझ आ जाये और आने वाले सुखधाम, सतयुग या भविष्य का दिग्दर्शन हो जाये, तो निश्चित तौर पर वे आत्मिक सुख व अन्य गुणों की धारणा के प्रति प्रयासरत हो जायें। देखा जाये तो काया को सुख, आत्मा की शांति से प्राप्त होता है; मन की शांति श्रेष्ठ कर्मों से संभव है; श्रेष्ठ कर्म, श्रेष्ठ संस्कारों से होते हैं; श्रेष्ठ संस्कार, श्रेष्ठ स्मृति से बनते हैं और परमपिता निराकार शिव व उनकी श्रीमत की स्मृति ही सर्वश्रेष्ठ संस्कारों की आधारशिला है। परंतु जब तक उस परमपिता शिव के स्वरूप का ज्ञान न हो, तब तक उसकी स्मृति आ नहीं सकती। इस प्रकार सुख की जननी 'ज्ञान' है।

आनन्द – आत्मा का छठा मौलिक गुण है आनन्द। कह तो यह दिया जाता है कि आनन्द सर्वोच्च स्थिति है और उसका उल्टा कुछ होता नहीं परंतु आनन्द का उल्टा 'व्याकुलता' है। आनन्द को हर्ष, सुख, प्रसन्नता आदि समझ लिया जाता है परंतु आनन्द इनसे भिन्न है। यह तो आत्मा के ऊपर, पूर्व में किये गये सत्कर्मों का प्रभाव है जो अपनी छाप चाल-चलन और चेहरे पर भी छोड़ता है।

शक्ति – आत्मा का सातवां मौलिक गुण 'आत्मिक शक्ति' है। यह शारीरिक शक्ति नहीं है परंतु यह शारीरिक शक्ति को प्रभावित करता है। एक ठिगना-सा दुबला-पतला व्यक्ति भी कई बार अच्छे-खासे बलिष्ठ व्यक्ति को, इच्छा शक्ति द्वारा शारीरिक शक्ति पैदा कर पछाड़ देता है। मायावी सूक्ष्म शक्तियों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या,

द्वेष, आलस्य, अलबेलापन आदि) को पछाड़ने के लिए आत्मा को अष्ट शक्तियों की आवश्यकता होती है।

आत्मा की उपमा एक ऐसी बैटरी से की जाती है जो परमात्मा रूपी पावर जनरेटर से शक्ति ले कर अपनी शाश्वत, सनातन, नित्यस्वरूप, अक्षय स्थिति को बनाये रखती है। वैसे तो सारी आत्मायें ही अजर, अमर, अविनाशी हैं परंतु देखना यह है कि 'क्या मैं आत्मा, निराकारी लोक में लंबे समय तक निद्रा जैसी अवस्था में पड़ी रहने वाली हूँ?' या 'मैं आत्मा सारे कल्प में भिन्न-भिन्न पार्ट बजा कर अंत में परमपिता शिव से मिलन मनाने वाली हूँ?'

शरीर तो हर आत्मा को देर-सवेर मिल ही जाता है परंतु महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शरीरधारी जीवन सात मौलिक गुणों से युक्त है या विकारों से युक्त है। **आत्मा के मौलिक गुण, आत्मा के अंदर से उभरते हैं जबकि पाँच मुख्य विकार आत्मा में बाहर से प्रवेश पाते हैं। जहाँ विकार हैं वहाँ मौलिक गुण उभर नहीं सकते।** हाँ, यह संभव है कि विकार छूटते जायें और मौलिक गुण आत्मा में उभरते जायें। इसकी विधि 'सहज राजयोग' की पढ़ाई द्वारा प्राप्त होती है। ये सात गुण फिर अनेक दिव्य गुणों की प्रवेशता का द्वार खोलते हैं। आइये, गुणवान बनें। ❖

ज्ञान का विचार सागर मंथन करने से खुशी और शक्ति मिलती है, धारणा परिपक्व होती है और पुराने संस्कार बदल जाते हैं।

मानव मात्र की तीन श्रेणियाँ

अशोक एल. घेवडे, हडपसर, पूना

भिन्नता भरे इस संसार में मानव भी भिन्न-भिन्न स्वभाव के हैं। मुख्य रूप से, स्वभाव की दृष्टि से उन्हें तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है –

1. काँटे जैसे लोग – ऐसे लोगों की प्रकृति ऐसी होती है कि वे अकारण ही दूसरों के लिए विघ्न बनते हैं। भले ही आप उनका कुछ न बिगाड़ें, उनसे सौ कोस दूर रहें, फिर भी वे परेशान किए बिना नहीं रहते हैं। शुभ कार्य में विघ्न डाले बिना उन्हें शान्ति नहीं मिलती। जैसे बिल्ली पियेगी नहीं तो दूध को गिरा देगी। वे दूसरों के खुशी और आनन्द से भरपूर वातावरण को सहन नहीं कर सकते, उन्हें दूसरों का रोना ही अच्छा लगता है। जैसे कांटा कठोर होता है और दूसरों को पीड़ा पहुँचाता है उसी प्रकार, ये लोग दूसरों के लिए काँटे के समान पीड़ाकारी होते हैं। इनका आगमन भी शांत वातावरण में विषाद भर देता है। अपनी घातक प्रवृत्ति के कारण ये अंत में महादुखी होते हैं। इनके जीवन का संध्याकाल बड़े कष्ट में गुजरता है।

2. जैसे से तैसा व्यवहार करने वाले लोग – ये लोग भले के साथ भलाई का और बुरे के साथ बुराई का व्यवहार करते हैं। ये मानते हैं कि अपने साथ जो अच्छा व्यवहार करे उसके साथ हमें अच्छा व्यवहार करना चाहिए और जो बुरा करे उसके साथ हमें भी बुरा व्यवहार करना चाहिए। पशु भी अपने दुश्मन से बदला लेता है। बैल को लकड़ी से पीटा जाए तो वह सींग से मारने की कोशिश करता है। इसी प्रकार इनमें भी बदले की भावना तीव्र होती है।

3. फूल जैसे – ऐसे व्यक्ति दुनिया में गिने-चुने होते हैं। ये मानवीय देह में रहते हुए भी उससे न्यारे होकर रहते हैं। इनमें गुणों के दर्शन होते हैं। इनका व्यवहार फूल जैसा होता है। फूल को कोई तोड़े या कुचल दे तो भी वह सुगंध प्रदान करता है। इसी प्रकार, फूल जैसे ये लोग अपकारी या उपकारी – दोनों पर सतत् उपकार की ही वर्षा करने वाले होते हैं। इनका सिद्धांत होता है – जो तुम्हारे मार्ग में काँटे बिछाए उसके मार्ग में भी तुम फूल बिछाओ। **अपने ही दाँत से यदि जीभ कट जाती है तो क्या आप अपने दाँतों को तोड़ डालते हैं? यदि नहीं तो फिर जिसने अज्ञानतावश कोई भूल कर दी है तो उसके साथ कटु व्यवहार करने की क्या आवश्यकता है? देखो उस चंदन वृक्ष को जो स्वयं को काटने वाले कुल्हाड़े को भी सुगंध से भर देता है। तुम तो फिर मानव हो, अपकार का बदला उपकार से चुकाना देवत्व है। इस उत्तम प्रकृति के लोग ही इस धरती के सुपुत्र हैं।** वे मर कर भी अमर हो जाते हैं। आइये निरीक्षण करें, हम कैसे हैं? यदि हम सतयुग में उच्च पद पाना चाहते हैं तो हमें फूल जैसा बनना होगा। ❖

एक गाय और एक नारी

• ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

हमें एक गाँव में प्रवचन के लिए निमंत्रण मिला। निश्चित समय पर जब हम निश्चित घर में पहुँचे तो परिवार के सदस्य आँगन में खड़े खिलखिला रहे थे। एक व्यक्ति के हाथ में मिठाई का डिब्बा था, वह सबको मिठाई बाँट रहा था। निकट पहुँचने पर मिठाई का एक टुकड़ा उन्होंने हमारे हाथ पर भी रख दिया। टुकड़े को पकड़ते हुए हमने पूछा, खुशी का कारण भी तो बताइए। उन्होंने खुले आँगन में बँधी हुई एक गाय की तरफ इशारा किया और कहा, आज सुबह 4 बजे इस गाय ने चौथी बछड़ी को जन्म दिया है। इसकी पहली तीन बछड़ियाँ भी काफी बड़ी हो गई हैं। एक तो लगभग गाय बनने वाली है। ये मिठाई बछड़ी के जन्म की बधाई है। हमने देखा, गाय के सींगों में लाल रंग की छोटी-सी चुनरी फँसाई हुई थी और उसके मस्तक पर तिलक किया हुआ था। वह अपनी नवजात बच्ची को प्यार से चाट रही थी। हमने भी पास जाकर गाय और बछड़ी के मस्तक को सहलाया और फिर सभी को उसी आँगन में प्रवचन के लिए बैठा दिया। जब सभी बैठ गए तो मैंने पूछा – आपकी इकलौती बहू कहाँ है? वह क्यों नहीं आई? सास ने कहा, बहन जी! वह बीमार है, अंदर कमरे में सोई है, आप चालू कर दें। मेरी उत्सुकता बढ़ी कि ऐसी क्या बीमारी है जो घर के आँगन में होने वाले सत्संग में वह नहीं आ सकती। मेरी अधिक उत्सुकता को देखकर सास ने मेरे कान में कहा, बहन जी! उसने लगातार तीन बेटियों को जन्म दिया और अब चौथी बेटी जब उसके पेट में आई तो घर में मातम छा गया। कल ही अस्पताल से उसकी विदाई करवाके आई हूँ। इतना सुनते ही मेरे मन के पर्दे पर एक बार गाय और एक बार वो नारी कौंधने लगी। प्रश्न उठने लगा कि गाय बड़ी या नारी? गाय की चौथी बेटी के जन्मदिन पर मिठाई बँट रही है और नारी की चौथी बेटी के आगमन के समाचार से मातम छा गया है। गाय अपनी बेटी को खुशी से चाट रही है और नारी अपनी बेटी को सदा के लिए विदाई देकर मुँह छिपाकर कमरे में बंद पड़ी है। आप ही बताइए, गाय बड़ी या नारी? पशु बड़ा या इंसान?

यदि मनुष्य पशु से बेहतर है तो वह अपनी पाँच कर्मेन्द्रियों के कारण नहीं लेकिन छठी इंद्रिय के कारण, जिसे ज्ञान-इंद्रिय कहा जाता है। जैसे एक घोड़ा दौड़ने में मनुष्य को मात दे जाता है। बिल्ली और कुत्ता सूंघने में मनुष्य को पीछे छोड़ देते हैं। हिरण की सुनने की शक्ति मनुष्य से कई गुना अधिक है। हाथी की वजन उठाने की योग्यता की बराबरी कोई मनुष्य नहीं कर सकता। और भी बहुत सारे प्राणी हैं जो ऊँचाई पर चढ़ने, छलांग मारने, समय और परिस्थिति प्रमाण अपने को छिपाने, गर्मी-सर्दी से बचने की योग्यताएँ मनुष्य से अधिक रखते हैं। फिर भी यदि मनुष्य को पशु से बेहतर कहा गया तो इसलिए कि उसके पास एक ऐसी छठी इंद्रिय है, जो कुशल इंद्रियों वाले इन जानवरों को भी वश कर सकती है और मानवीय इंद्रियों को भी वश कर सकती है। **यह छठी इंद्रिय है मानव की आत्मिक और ईश्वरीय ज्ञान की योग्यता। लेकिन क्या आज मनुष्य अपनी इस योग्यता को जानता है? इस योग्यता को जानने का अर्थ है, अपने वास्तविक अजर-अमर स्वरूप को जानना। पाँच तत्वों के बने शरीर को चलाने वाली अदृश्य सत्ता आत्मा का अनुभव करना। जब वह आत्मा को जान जाता है, आत्मा के स्वरूप में टिक जाता है, आत्मा के मूल गुणों को आत्मसात् कर लेता है तो प्रकृति, इंद्रियाँ और संसार की हर उपलब्धि उसके आगे नतमस्तक हो जाती है। वह परिस्थितियों का दास नहीं बल्कि उनका मालिक बन जाता है। वह संसार के हाथों का खिलौना नहीं बल्कि साक्षीदृष्टि से संसार के खेल का आनन्द लेने वाला बन जाता है। आत्मा के ज्ञान से ही उसका संबंध सर्वशक्तिवान परमात्मा से जुटता है।** परमात्मा से संबंध जोड़कर वह अखुट भाग्य की चाबी प्राप्त कर लेता है।

उसके हर संकल्प की सिद्धि होने लगती है और उसका जीवन हीरे तुल्य बन जाता है। इसलिए ईश्वरीय ज्ञान और ईश्वर के साथ मन और बुद्धि का जुड़ाव, इन दो बातों से ही वह अपनी उच्चता, महानता और श्रेष्ठता को सिद्ध कर सकता है, नहीं तो नर और पशु की तुलना में नर का पलड़ा हीन हो जाता है।

प्रारम्भ में वर्णित घटना से कोई यह न समझ ले कि समाज में केवल नारी की ही कद्र नहीं और पुरुष को तो बहुत सम्मान मिल रहा है। यदि जन्म देने वाली की ही कद्र ना हो तो क्या पुत्र कद्र का योग्य पात्र हो सकता है? पात्र और योग्य पात्र में बहुत अन्तर है। एक अखबार में समाचार आया था कि भारत के कुछ राज्यों में लोग पुत्र की चाह में दूर-दराज की गरीब महिला को लेकर आते हैं, पुत्र उत्पन्न होने तक उसे रखते हैं और जैसे ही वह पुत्रवती हो जाती है, पुत्र को रखकर उसे पुन: भटकने वाली स्थिति में छोड़ देते हैं। पुरुष प्रधान समाज में यह मान्यता बनती जा रही है कि बालक को नाम तो पिता से मिलता है इसलिए माँ चाहे हो या ना हो और चाहे कहीं भी हो, कैसी भी हो उससे क्या फर्क पड़ता है? लेकिन संस्कार तो माँ से ही मिलते हैं। बिना संस्कार मिले आज पुत्रों की क्या गति हो रही है। आए दिन समाचार-पत्रों में पढ़ने को मिलता है – 'पुलिस ने छापा मारा तो होटल के एक कमरे में धनाढ्य घर के पाँच युवक ब्लू फिल्म देखते पकड़े गए', 'शराब के नशे में मोटरसाइकिल चलाते हुए एक युवक ने दो बच्चों को कुचल दिया', 'कॉलेज से फ़रार हुए एक युवक को नशे की हालत में सड़क पर बेहोश पाया गया', 'लड़कियों से छेड़छाड़ के आरोप में कुछ बदचलन लड़के गिरफ़्तार', 'जाली कागज़ बनवाकर पिता की संपत्ति पर हाथ साफ करके एक युवक विदेश चला गया', 'बूढ़े पिता की पुत्र ने लाठियों से हत्या कर दी' आदि-आदि। इस प्रकार के समाचार, पुत्रों के जन्म पर मिलने वाली बधाइयों को चेतावनी दे रहे हैं। समाज जिन बेटों को पैदा होने का अधिकार दे रहा है उनके कर्त्तव्य की तरफ उसकी आँखें बंद हैं। समाज को केवल पुत्र चाहिएँ फिर चाहे उनके कर्म कैसे भी हों और समाज जिन पुत्रियों को जीने नहीं देना चाहता, उनके भी आत्मबल से वह अनभिज्ञ है, फिर चाहे वे अपने कर्मों से कितनी भी महान क्यों न बन जाएँ।

कोई कह सकता है कि पुत्रियाँ भी बिगड़ सकती हैं। अच्छा, तो जब दोनों के ही बिगड़ने की संभावना है तो सज़ा केवल पुत्री को क्यों? समाज जन्म लेने वाली को सज़ा देता है लेकिन जन्म देने वालों के लिए कोई आचार संहिता क्यों नहीं बनाता? जन्म देने वाले अपने को सुधार लें तो समस्याएँ अपने आप खत्म हो जाएंगी। **यदि वे दृढ़ संकल्प कर लें कि चाहे पुत्र जन्मे, चाहे पुत्री, उसे ऐसी पालना, ऐसे संस्कार दिए जाएं कि वे सुखदेव जैसे बनें। उनका पुत्र या पुत्री होना किसी के हाथ में नहीं है पर उनको संस्कारित करना तो हाथ में है ना! जो वश में नहीं है उस तरफ बढ़ने के बजाय, जो वश में है उस तरफ क्यों न बढ़ा जाये। श्रेष्ठ संस्कारों वाले पुत्र, श्रेष्ठ संस्कारों वाली पुत्रियों को मान-सम्मान देंगे, ऊँची निगाह से देखेंगे। इससे नारी और नर दोनों सुरक्षित हो जाएंगे।**

भगवान कहते हैं शरीरों के भीतर विद्यमान सब आत्माएँ मेरी सन्तान हैं। मैं आत्माओं का पिता हूँ। आत्माओं के संबंध में मेरी दो आँखें नहीं हैं। मैं एक आँख से सब आत्माओं को देखता हूँ। मुझे सभी प्रिय हैं। जब मुझे सभी प्रिय हैं तो हे मनुष्य! तुम भी सबको आत्मिक भाव से देखते हुए सबको स्नेह दो। नर-नारी तो इस सृष्टि में सतयुग में भी थे लेकिन वहाँ नारी नर से भी ऊँची थी। यदि नारी को नर से भी ऊँचा स्थान देने से यह संसार स्वर्ग बन सकता है तो क्यों न हम उस मार्ग पर बढ़ें। जब से नारी पददलित हुई तब से संसार नर्क बनता गया, तो क्यों न हम उस मार्ग को छोड़ें। यदि मनुष्य पशु से ऊँचा बनना चाहता है तो हिंसा से हाथ रंगने बंद करे और ईश्वरीय ज्ञान के द्वारा, सर्वश्रेष्ठ सद्गुण पवित्रता के द्वारा अपनी समस्या सुलझाए। नहीं तो पशु से श्रेष्ठ होने का दावा, शाब्दिक दावा ही रह जाएगा, व्यवहार में वह निकृष्ट ही सिद्ध होगा।

❖

हे उन्नति के पथिको, ज़रा इस ओर भी ध्यान दो

• ब्रह्माकुमार वैजनाथ, ओ.आर.सी.

आह! कितना न सुन्दर नज़ारा है इस भौतिक जगत का! कितना प्रगति की ओर बढ़ रहा है यह संसार! गगनचुम्बी ये इमारतें, आसमान को चीरकर दिनों की यात्रा घंटों में कराने वाले ये हवाई जहाज, मीलों दूर से भी एक-दूसरे के साथ संवाद कराने वाले ये मोबाइल्स तथा ई-मेल्स, रिमोट दबाने मात्र से सुन्दर-सुन्दर नज़ारे दर्शाने वाला यह टेलीविजन, गर्मी में सर्दी व सर्दी में गर्मी का अहसास कराने वाला यह एअर कण्डीशनर! विज्ञान ने तो संसार को स्वर्ग बना डाला है, और भी दिनों-दिन न जाने क्या-क्या नये आविष्कार करता जा रहा है यह विज्ञान!

इतने सुखद साधन उपलब्ध होने के बावजूद भी आज का इंसान न जाने किन अज्ञात कारणों से दुखी है। भौतिक उपलब्धियाँ होते भी निराशा, हताशा, उदासी और नित्य उभरती नई-नई समस्याओं के काले बादल मानव मन पर परछाया जमाए हुए हैं। अपने पूर्वजों के जीवन का अध्ययन, दर्शन कर आज की पीढ़ी की जब उनसे तुलना करते हैं तो पाते हैं कि इन सौ वर्षों में संसार में जो विकास हुआ है वह तब नहीं था परन्तु फिर भी उनके जीवन में सुख, शांति, संतुष्टि तथा खुशी थी। आज की युवा पीढ़ी विकास की इस चकाचौंध में मानवीय मर्यादाएँ, सामाजिक सीमाएँ लांघती जा रही है जिसका स्पष्ट दर्शन हम उनमें पनपते उन्माद, चारित्रिक पतन, आतंक, हिंसा तथा संबंधों की दूरियों से कर रहे हैं। नारियों के अन्दर भी दिनों-दिन फैशन, अश्लीलता व वेश्यावृत्ति बढ़ती नज़र आ रही है। सभ्य भारतीय नारियाँ श्रेष्ठ परिधान से तन को पूर्ण ढक कर रखा करती थीं। जो नारी लज्जा के परदे में रहा करती थी, वही आज पाश्चात्य देशों का अनुसरण करते हुए खुले बाज़ार में अंग प्रदर्शन करने में हिचकिचाती नहीं है। इसी कारण सरकार द्वारा नारी सुरक्षा हेतु नित नई योजनाएँ बनाई जा रही हैं, फिर भी बढ़ते बलात्कारों, कुवृत्तियों व दुराचारों के प्रकरणों को समाप्त करने में अपने को असमर्थ महसूस करती है। उन्नति के इस दौर में नित-नित बनती नई योजनाएँ भी, नित्य उद्गम होने वाली समस्याओं के आगे छोटी पड़ती नज़र आ रही हैं। आखिर कैसे होगा इन समस्याओं का समाधान? इन सब बातों पर विचार करने पर क्या समझें, संसार उन्नति की ओर जा रहा है या अवनति की ओर?

विज्ञान ने सुख-साधन तो उपलब्ध कराए परंतु मन के बढ़ते दुख-दर्द के निवारण का कोई उपाय नहीं खोजा है। गर्मी में ठंडक का अनुभव कराने हेतु एअर कण्डीशनर की उपलब्धि कराई परन्तु मन के भीतर आग से भी तेज़ जल रही क्रोधाग्नि और अन्य के प्रति बदले, ईर्ष्या, द्वेष की भावनाओं को शीतल करने में विज्ञान अधूरा नज़र आता है। **आवश्यकता इस बात की है कि भौतिक उन्नति व सुख-सुविधाओं का उपभोग करते हुए भी मानव, दैनिक जीवन में स्व-अवलोकन करे, आंतरिक मूल्यों को जगाए, प्रेम व भाईचारे की लुप्त होती भावनाओं को सुजाग करे अर्थात् जीवन में विज्ञान व अध्यात्म का संतुलन बनाकर चले। जहाँ हम भविष्य की चिंता कर धन संचय के पीछे दौड़ रहे हैं वहीं पर हम थोड़ा समय निकालकर आत्मचिन्तन में भी लगाएं। जितनी प्रधानता हम स्थूल साधनों को जुटाकर ऐशो आराम पाने को देते हैं, उससे भी अधिक प्रधानता हम परमार्थ व पुण्य की पूंजी जमा करने को दें।** जितना महत्त्व हम शारीरिक स्वास्थ्य को देते हैं, व्यस्तता के बावजूद भी समय निकालकर व्यायाम करते हैं उतना ही महत्त्व हम मन को दुरुस्त रखने के लिए गीता में वर्णित राजयोग अर्थात् आत्म-स्मृति के अभ्यास से परमात्मा में मन लगाने को भी दें। तभी दिनों-दिन जो मूल्यों का ह्रास होता नज़र आ रहा है वह थम सकेगा। मानव, शुद्धि तथा सात्विक वृत्ति का विकास कर पाएगा। तभी हम वास्तविक रूप से उन्नति के पथ पर अग्रसर होंगे। तभी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी के रामराज्य का सपना साकार होगा। ❖

गुणों का दान सर्वोत्तम दान है

जीवन जीने की कला

• ब्रह्माकुमार बद्री विशाल, त्रिपाठीनगर, लखनऊ

एक बार एक संत के पास एक जिज्ञासु आया और बोला – स्वामी जी, जीवन में बड़ा कष्ट है, हम जीवन जीने की कला सीखना चाहते हैं। कुछ क्षणों के मौन के पश्चात् जिज्ञासु के हाथों की रेखायें देखते हुए संत बोले – अब आये हो जीवन जीने की कला सीखने, अब तो तुम्हारा जीवन सप्ताह भर बचा है। यह सुनते ही जिज्ञासु अवाक् रह गया और वापस घर लौट आया। सप्ताह के बाद वह पुन: संत के पास पहुँचा और बोला – स्वामी जी, जीने की कला सिखानी नहीं आती थी तो नहीं सिखाते परंतु आपने झूठ क्यों बोला, मैं तो सप्ताह बाद भी जिंदा हूँ।

संत ने पूछा – बीते सप्ताह में तुमने क्या किया? कैसी दिनचर्या रही? जिज्ञासु बोला – स्वामी जी, आपकी बात सुनते ही मन में विचार चलने लगे कि ज़िंदगी कितनी छोटी है, अभी तक मैंने कोई श्रेष्ठ कार्य तो किया ही नहीं। धन कमाने के चक्कर में आँखों की नींद गंवायी, सुख-चैन गंवाया, झूठ, कपट, बेईमानी का सहारा लिया, कितनों का दिल दुखाया, पाप किये, अब मेरी क्या गति होगी? फिर सोचा, बहुत गई थोड़ी रही, थोड़ी भी अब जाय। अब बचे हुए समय को क्यों न सफल कर लिया जाये।

समय सफल करने की लगन लग गई तो सबसे पहले उन लोगों से माफी मांगी जिनका दिल दुखाया था। इस प्रकार दिल को हल्का किया, सभी का कर्ज़ चुकाया। फिर मैंने महसूस किया कि यदि मेरे द्वारा अर्जित धन-संपत्ति से, मेरी मृत्यु के बाद भी कोई पाप कर्म होगा तो पाप का बोझ चढ़ता रहेगा। समझदार लोग तो पुण्य की पूंजी निरंतर बढ़ाने के लिए कुएँ, बावड़ियाँ, धर्मशालायें, मंदिर, गुरुद्वारे, सत्संग भवन, अस्पताल आदि बनवाते हैं ताकि निरंतर लोगों की दुआयें मिलती रहें। अत: मैंने तुरंत अपने बच्चों को जीवन-यापन के साधन उपलब्ध कराते हुए अपने एक मकान को सत्संग भवन बना दिया जिसमें एक त्यागी, तपस्वी, बाल ब्रह्मचारी महात्मा जी नित्य अपना प्रवचन करने लगे। अपनी चल संपत्ति भी उन्हीं महात्मा जी की अध्यक्षता में एक ट्रस्ट बनाकर उसके हवाले कर दी और मैं भी नित्य उसी सत्संग में जाने लगा। इस एक सप्ताह में मैंने यह ध्यान रखा कि मेरे किसी बोल और कार्य से किसी को कोई तकलीफ न हो। हर एक को सुख देना और सुखदायी बोल बोलना ही मेरे इन सात दिनों का लक्ष्य बन गया। मैं इस दुनिया में चंद दिनों का मेहमान हूँ, यह सोचकर दुनिया की हर चीज़ से दिल हटती गई और चलते-फिरते, खाते-पीते, सोते-जागते, कर्म करते सदा बुद्धि में यही रहा कि अब मुझे भगवान के घर जाना है।

संत जी मुस्कराकर बोले – मैंने तुम्हें जीवन जीने की कला ही तो सिखायी है। पिछले एक सप्ताह में तुमने जिस प्रकार का जीवन व्यतीत किया, वही तो जीने की कला है।

उपरोक्त वार्तालाप का सार यही है कि जीवन से उपराम होने पर ही जीवन जीने की कला आती है। लेकिन आज का इंसान तो ऐसे जीता है जैसे कि वह कभी मरेगा ही नहीं और ऐसे मरता है जैसे कि वह कभी जीया ही नहीं। वह यह भूल जाता है कि इस संसार में जो भी आया है उसे जाना है और जाना भी अचानक है। कौन-सी घड़ी अंतिम घड़ी होगी, यह ज्ञान किसी को भी नहीं है। अंतिम श्वास के पश्चात् दुनिया की सारी संपदा लगा देने पर भी, एक श्वास वापस नहीं मिल पाता। फिर भी इंसान अमूल्य श्वासों को कौड़ियों के पीछे व्यर्थ गंवाता रहता है। पहले वह पैसा कमाने के चक्कर में स्वास्थ्य, शांति और नींद गंवा देता है फिर इन्हीं चीज़ों को प्राप्त करने के लिये पैसे गंवाता है किंतु फिर भी उसे स्वास्थ्य, शांति और नींद नहीं प्राप्त होती। क्या जीवन है आज के इंसान का? तरस आता है ऐसे जीवन पर। परमपिता परमात्मा ने हम बच्चों को यही शिक्षा दी है कि बच्चे, **'हर घड़ी को अंतिम घड़ी समझो', 'बीती को बीती देखो, दुनिया न जीती देखो', 'दुआयें देते और दुआयें लेते रहो', 'निरंतर एक की याद में रहो', जीवन जीने की कला यही है।** ❖

जीवन में सच्ची शांति आत्मचिंतन द्वारा

• ब्रह्माकुमार कालू राम, टोंक (जयपुर)

आज बड़े-बड़े विद्वान-आचार्य अपनी महिमा में कहते हैं कि हमारे पास बहुत ज्ञान है परंतु ऐसे बड़े-बड़े विद्वानों से जब कहा जाए कि आप हमारी एक छोटी-सी पहेली 'परमात्मा का नाम, रूप, देश, काल और कर्त्तव्य क्या है' का समाधान कर दीजिए तो वे सही ढंग से उत्तर नहीं दे पाते। परमात्मा को ही नहीं जाना, बीज को ही नहीं जाना तो विस्तार के ज्ञान का क्या लाभ? कबीरदास जी ने कहा है –

पोथी पढ़ते जग मुआ
पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का
पढ़े सो पंडित होय।।

भावार्थ है कि केवल शास्त्रों का ज्ञान जानने से ही व्यक्ति विद्वान नहीं बन सकता। उसे अपने जीवन में प्रेम का पाठ भी पढ़ना होगा। उन्होंने ढोंगी महात्माओं और विद्वानों पर भी कटाक्ष करते हुए लिखा है –

दाढ़ी मूँछ मुंडाय के,
हुआ जो घोटम घोट।
मन को क्यों नहीं मूँडिए,
जामे भरिया खोट।।

इसका भी भावार्थ है कि दाढ़ी-मूँछ मूंडाने से ही व्यक्ति महान नहीं बनता है, महान बनने के लिए मन के विकार, बुराइयाँ खत्म करने होंगे। भक्तजन सिमरणी (माला) हाथ में लेकर या गऊमुखी (थैली) में रखकर जाप करते रहते हैं जबकि अंदर अनेक बुराइयाँ भरी पड़ी हैं। ऐसे लोगों को जगाते हुए भी उन्होंने कहा –

माला तो मन की भली,
नहीं काठ का भारा।
माला में गुण होवे तो,
क्यों बेचे मनिहारा।।

इस प्रकार बाह्य आडंबरों का विरोध करके, मन की सच्ची लगन उस निराकार परमात्मा 'राम' से जोड़ने का संदेश उन्होंने दिया। परंतु, आज का मनुष्य जीवन को श्रेष्ठ कार्यों में लगाकर सफल नहीं बना पा रहा। माया की चकाचौंध ने उसकी बुद्धि को ताला लगा दिया है। धन, वैभव, वस्तु, जमीन, जायदाद, नारी, देह-संबंधी आदि में ही वह समय, श्वास, संकल्प, तन-मन-धन लगाए जा रहा है। आज उसे कहो, भाई, सत्संग के लिए भी थोड़ा समय निकालो, थोड़ा आत्मचिंतन, परमात्म-चिंतन करो तो कहेगा, अभी फुर्सत नहीं है, अभी यह काम करना है, वहाँ जाना है, वहाँ नहीं गए तो काम कैसे होगा। इस पर एक दृष्टांत याद आता है –

एक गाँव में एक धुनियाँ रहता था। रोज़ थोड़ी-सी रूई लाता, धुनकर दे आता, जो मज़दूरी मिलती उसी से अपना और परिवार का गुज़ारा चलाता। एक दिन मुंबई से उसका एक मित्र आया और बोला, दोस्त, तुम कब तक थोड़े से धन से गुज़ारा चलाते रहोगे, मेरे साथ मुंबई चलो, वहाँ हम मिलकर अच्छा पैसा कमायेंगे। धुनियाँ उसकी बातों में आ गया और उसके साथ हो लिया। जैसे ही वे जहाज़ से उतरे, दूसरे जहाज़ से भी क्रेन द्वारा रूई किनारे पर उतारी जा रही थी जिससे किनारे पर रूई का पहाड़ जैसा दिखाई देने लगा। इतनी रूई एक साथ देख धुनिएं के मुँह से निकला – 'या रूई को कौ धुनेगो, कौ बुनेगो।' उसकी बातों से परेशान दोस्त ने उसे समझाया, हमें इससे क्या मतलब, आओ हम अपने रास्ते चलें परंतु वह तो जैसे पागल ही हो गया और वही बात बार-बार दुहराने लगा। दोस्त उसे वापस गाँव ले आया। कई जगह दिखाने पर भी कोई आराम नहीं आया। अंत में गाँव का एक बुजुर्ग व्यक्ति उससे मिलने आया, तो वह फिर बोला – 'कौ धुनेगा, कौ बुनेगा।' बुजुर्ग व्यक्ति उसकी सारी बात समझ गया और बोला – 'वा में तो आग लग गई।' यह सुनकर उसके मुँह से निकला – 'क्या! आग लग गई? अब सारा खेल ही खत्म हो गया। अब ना धुनने की ज़रूरत, ना बुनने की ज़रूरत।' बस, उसका दिमाग पहले की तरह ही ठीक हो गया।

उस धुनिएं जैसी हालत आज के आदमी की भी है। संसार में घटने वाली घटनाओं को देख वह अनावश्यक चिंतन भी करता है, चिंता भी करता है जैसे, अमुक

व्यक्ति के इतने बच्चे हैं, इनकी शादी कब होगी? वह व्यक्ति बीमार है फिर भी नौकरी पर क्यों जा रहा है? उस आदमी ने अपना घर क्यों नहीं बनाया? उसकी अपने भाई से बोल-चाल बंद क्यों है? वह महिला नौकरी क्यों करती है? ... और भी जानी-अनजानी हज़ारों प्रकार की व्यर्थ बातें। दूसरे के फटे में टाँग डालकर वह दिन भर उलझता ही रहता है। यदि वह कहता है कि मैं व्यस्त हूँ तो सच में, उसका मन इसी प्रकार की व्यर्थ बातों में व्यस्त है। यही व्यर्थ सोच कालांतर में विकारी, विषैली बनकर उसे रोगग्रस्त करती है। उसे अपने होने का बड़ा अहम् है इसलिए यह भी सोचता है कि मेरे बिना उस काम को, इस काम को कौन करेगा? लेकिन वह यह भूल जाता है कि यह संसार उसके आने से पहले भी चल रहा था। भगवान शिव विश्व परिवर्तन की जिस बात को पिछले 72 वर्षों से कह रहे हैं, अब तो मीडिया के विभिन्न साधन भी विभिन्न तिथियों का हवाला देते हुए कलियुग के परिवर्तन की घोषणा करने लगे हैं। मानो वे कह रहे हों – 'हे मानव! तुम जिस संसार की चिन्ता में खोए हुए हो, वह तो अब राख होने वाला है।' रूई धुनने वाले की तरह इस बात पर उसे विश्वास आ जाए तो वह भी चिन्तामुक्त हो सकता है। विश्वास नहीं करेगा तो उसी की तरह 'कौ धुनेगा, कौ बुनेगा' की उधेड़बुन में जीवन को बर्बाद करता रहेगा।

सच तो यह है कि आत्मचिंतन और परमात्म-चिंतन के द्वारा ही जीवन में सच्ची सुख-शांति आ सकती है। आत्मा, खोई हुई शक्तियाँ पुन: प्राप्त कर सकती है। आत्मचिंतन द्वारा ही परमात्म-चिंतन संभव है, इसे ही 'सहज राजयोग' के नाम से जाना जाता है। राजयोग अर्थात् अपने को आत्मा समझकर अपना संबंध परमात्मा से जोड़ना। राजयोग का अभ्यास निरंतर करते रहने से आत्मा के विकर्म विनाश होते हैं, आत्मा में शक्ति का संचार होता है और जीवन सुख-शांति संपन्न बन जाता है, खुशहाली आ जाती है। राजयोग के ज्ञान और अभ्यास के लिए स्थानीय प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय में संपर्क कर सकते हैं जहाँ राजयोग की शिक्षा नि:शुल्क प्रदान की जाती है। ❖

ग्लोबल हॉस्पिटल में सर्जरी कार्यक्रमों की जानकारी

ग्लोबल हॉस्पिटल में हर महीने महत्त्वपूर्ण सर्जरी व जाँच सुविधायें कुशल व अनुभवी सर्जन द्वारा प्रदान की जा रही हैं।

नियमित घुटने (Joint Replacement) जोड़ प्रत्यारोपण सर्जरी सुविधा –

ऑपरेशन दिनांक : 21 से 23 मार्च, 2009

ऑपरेशन सुविधा : मुंबई से कुशल व अनुभवी सर्जन डॉ. नारायण खण्डेलवाल द्वारा

सूचना : पूर्व जाँच के लिए केवल ऑपरेशन के इच्छुक रोगी संपर्क करें – डॉ. मुरलीधर शर्मा, फोन नं. : 09413240131, ग्लोबल हॉस्पिटल

नियमित लेप्रोस्कोपिक व जटिल सर्जरी कार्यक्रम –

अनुभवी लेप्रोस्कोपिक सर्जन द्वारा – डॉ. टी.आरासु, चैन्नई व डॉ. हंसमुख मेहता, लेप्रोस्कोपिक सर्जन, ग्लोबल हॉस्पिटल

संपर्क करें : डॉ. संजय कुमार वर्मा, जनरल सर्जन, सर्जरी विभाग, ग्लोबल हॉस्पिटल

केवल आवश्यक जानकारी हेतु संपर्क करें – डॉ. प्रताप मिड्ढा, ट्रस्टी व चिकित्सा अधीक्षक, ग्लोबल हॉस्पिटल,

फोन नं. : (02974) 238347/48/49 **फैक्स** : 238570

वेबसाइट : www.ghrc-abu.com **ई-मेल** : ghrcabu@gmail.com

धन्य हुआ हमारा जीवन

(दिव्य जीवन कन्या छात्रावास, इंदौर की कुमारियों के अनुभव)

यहाँ भिन्न-भिन्न प्रदेश, देश-विदेश, भाषा, जाति के बहुरंगीय, बहुआयामी फूल हैं, कलियाँ हैं लेकिन इन सबका माली, इनकी पालना करने वाला बागवान है – एक शिव परमात्मा। यहाँ सभी वर्गों के हैं, न कोई छोटा है, न कोई बड़ा लेकिन सबकी साधना एक है – त्याग, तपस्या और सेवा। यहाँ सबके स्वभाव, संस्कार, योग्यता अलग-अलग हैं लेकिन सबका पुरुषार्थ एक है – जीवन में परिवर्तन। यहाँ हर शख्स एक-दूसरे से भिन्न है लेकिन सबका चिंतन, मनन, धारणा, आस्था, उद्देश्य और मंज़िल एक है और वो है – भगवान की प्रत्यक्षता।

जी हाँ, हमारा इशारा है इंदौर, म.प्र. स्थित 'दिव्य जीवन कन्या छात्रावास' बनाम 'शक्ति निकेतन' की ओर। शक्ति निकेतन विगत 27 वर्षों से अद्‌भुत तपस्या में अनवरत लगा हुआ है। इसका एकमात्र उद्देश्य है कन्याओं के जीवन से बुराई के काँटों को निकालकर उन्हें सुवासित फूल बनाना; उनका सच्चा जीवन निर्मित करना और श्रेष्ठ चरित्रवान के रूप में प्रस्तुत करना। तो जानिए, यहाँ रहकर दोनों (लौकिक और ईश्वरीय) पढ़ाई कर रही कन्याओं के सच्चे और विस्मयकारी अनुभव उन्हीं के शब्दों में –

किरण अग्रवाल
(B.A. 3rd Year)
राजनांदगाँव
(छ.ग.)

मुझे बाहर का आकर्षण था। फ्रेन्डशिप करना, घूमना-फिरना, फिल्म देखना बहुत अच्छा लगता था। इसके कारण मेरी मानसिकता बहुत स्वार्थी और विकारी हो गई थी, अंदर से अपने आपको खाली महसूस करती थी और निराशा से घिरी रहती थी। पर यहाँ आने के बाद मैंने मुख्य रूप से यही सीखा कि अपने विचारों को कैसे शुद्ध रखें? यहाँ के पवित्र संग, पवित्र भोजन और अशुद्ध बातों के परहेज़ ने मुझे बाहर से ही नहीं बल्कि अंदर से शुद्ध बनाया है। मैंने यहाँ भगवान से व स्वयं से भी प्यार करना सीखा है। अब निराश होने की बजाय हर परिस्थिति में आशावादी दृष्टिकोण होता है। जीवन में आने वाली हर समस्या का सामना साहस से करती हूँ। ✰

प्रियंका सूर्यवंशी
(9th class)
बड़ोदरा

यहाँ आने से पहले मेरी कुछ आदतें अच्छी नहीं थीं जैसे कि मैं पहले चोरी करती थी, बिना पूछे किसी का कुछ भी सामान उठा लेती थी, दूसरों को परेशान करना, झूठ बोलना आदि विकर्म करने में मुझे मजा आता था। लेकिन यहाँ के वातावरण में नियमित ज्ञान-योग करने से मेरी ये गंदी आदतें छूट गई हैं। अब ईमानदारी ही मेरी सबसे बड़ी विशेषता बन गई है। ✰

नुपुर बावणे
(12th class)
पूणे

होस्टल में आने से पहले बहुत-सी व्यर्थ आदतें थी मुझमें। माता- पिता की इकलौती संतान हूँ, वे दोनों काम में व्यस्त रहते हैं, उन्होंने कभी मुझ पर इतना ध्यान नहीं दिया कि मैं क्या कर रही हूँ। व्यर्थ आदतें थीं जैसे कि इंटरनेट पर चैटिंग करना, दोस्त बनाना और मोबाइल पर घण्टों बातें करते रहना। इन आदतों से मैं खुशी हासिल करना चाहती थी। होस्टल में आकर मुझे सबसे बड़ा तोहफा मिला है 'सच्ची खुशी' जो मुझे अन्यत्र कहीं नहीं मिल सकती थी और जिसे मैं व्यर्थ बातों में ढूँढ़ा करती थी। मैं जीवन में सबसे अलग कुछ कर दिखाना चाहती थी, पर वह रास्ता नज़र नहीं आता था। वह रास्ता मुझे 'दिव्य जीवन कन्या छात्रावास' में आकर मिला। यहाँ के माहौल में, निमित्त आत्माओं के क्लासेस द्वारा बहुत कुछ सीखने को मिला। यहाँ सही मायनों में अच्छी

आदतें, सादगी और पवित्रता का पाठ पढ़ रही हूँ जो मेरे जन्मदाता भी शायद ही मुझे पढ़ा पाते। ✫

याईफबी
(9th Class)
मणिपुर

यहाँ आने से पहले लड़की होते हुए भी मेरा लाइफ स्टाइल बिल्कुल लड़कों जैसा था। मेरा संग, खानपान, घूमना-फिरना आदि लड़कों के साथ ही था। मुझे उनमें रहना ही अच्छा लगता था। सबसे लड़ना-झगड़ना, उलटा-सुलटा बोलना, गुस्सा करना, तंग करना, कोई काम नहीं करना, यही मेरी दिनचर्या थी। लेकिन छात्रावास के माहौल में आकर मेरा जीवन ही बदल गया है। अब तो बात करने का मेरा तरीका, कपड़ों की सादगी, मधुर व्यवहार आदि जो भी देखते हैं, आश्चर्य करते हैं। मेरे परिवार वालों की तो खुशी का ठिकाना ही नहीं है। यही नहीं, अब मुझे हिन्दी भाषा का बेहतर ज्ञान भी हो गया है। ✫

गौरी लक्ष्मी
(11th Class)
बरहमपुर
(उड़ीसा)

जब मैं घर में रहती थी तब हर बात में दूसरों पर निर्भर रहती थी। अपने से बड़ों को बहुत जवाब देती थी। मुझे जीवन में क्या करना है, क्या बनना है, इसका मुझे कोई सही ज्ञान नहीं था। यहाँ पर आने के बाद मैंने अपने आप पर निर्भर रहना सीखा। अपने जीवन का महत्त्व समझा। पहले हर बात में टेंशन लेती थी लेकिन यहाँ शिव बाबा को अपना सारा बोझ देना सीखा। इससे मैं हलकी हो गई हूँ और मेरी पढ़ाई में रुचि भी बढ़ी है। ✫

राजमणि
(9th Class)
बिहार शरीफ

जब से मैं होस्टल आई हूँ तब से मेरे अंदर बहुत परिवर्तन हुआ है। यहाँ आकर ज्ञान-योग की गहराई में जाने का अवसर मिला जिससे मेरे अंदर शिव बाबा के प्रति प्यार बहुत बढ़ा है। ज्ञान-योग में मेरी उन्नति को देखकर मेरे परिवार वाले बहुत प्रभावित हुए। मेरे मम्मी-पापा ज्ञान में नहीं चलते थे। अभी दोनों ही ज्ञान में चलते हैं। यहाँ प्रत्येक सोमवार को मौन रखा जाता है, मैंने मौन रखना भी सीखा है। ✫

दिव्य जीवन कन्या छात्रावास की विशेषतायें –

➢ भारत देश के 24 प्रांतों एवं अन्य देश नेपाल व श्रीलंका की लगभग 150 कन्याओं का निवास।

➢ विभिन्न कलायें जैसे – गायन, वादन, नृत्य, लेखन, भाषण, सिलाई, कढ़ाई, बुनाई, साफ-सफाई, गृहसज्जा, पाककला आदि का प्रशिक्षण।

➢ इस सत्र में छात्रावास का परीक्षा परिणाम सर्वोत्कृष्ट। सर्वाधिक कन्याओं ने विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में प्रथम-द्वितीय स्थान ही नहीं बल्कि विशेष योग्यता हासिल कर छात्रावास का नाम गौरवान्वित किया। होस्टल की कुमारी वासुमति ने स्नातक परीक्षा (बी.ए.) में देवी अहिल्या विश्वविद्यालय की मेरिट लिस्ट में सर्वश्रेष्ठ (द्वितीय) स्थान प्राप्त किया।

➢ विभिन्न विभागों द्वारा होस्टल का संचालन जैसे – शिक्षा विभाग, सफाई विभाग, कला एवं संस्कृति विभाग, किचन विभाग, साज-सज्जा विभाग, एकाउण्ट विभाग आदि।

छात्रावास में नई कन्याओं के प्रवेश हेतु जनवरी से अप्रैल माह तक संपर्क कर सकते हैं। प्रवेश की प्रक्रिया मई, जून माह में प्रारंभ हो जाती है। अधिक जानकारी हेतु संपर्क करें –

बी.के. करुणा
दिव्य जीवन कन्या छात्रावास
ओम शांति भवन, न्यू पलासिया
इंदौर (म.प्र.) - 452 001
फोन नं. : 0731-2531631
मोबाइल : 094253-16843
फैक्स : 0731-2430444
ई-मेल:
shaktiniketan.ind@bkivv.org
shaktiniketan@gmail.com

❖

गहन अंधकार में फूटी उजाले की किरण

• ब्रह्माकुमार अशोक बनौधा, होशंगाबाद

रात के गहन सन्नाटे में दुनिया गहरी नींद सो रही थी परंतु हमें नींद कहाँ? बच्चे सो रहे थे पर हम दोनों की आँखों से नींद कोसों दूर थी। आगे जिंदगी का क्या होगा, हर दिशा में अंधकार नज़र आ रहा था। हम पति-पत्नी आपस में बातें करके एक-दूसरे को झूठी सांत्वना दे रहे थे। पिछले सात वर्षों से गंभीर बीमारी से पीड़ित पत्नी जीवन के अंतिम दिन गिन रही थी। डॉक्टरों ने जवाब दे दिया था, हर इलाज बेकार साबित हो रहा था। डॉक्टरों का कहना था कि सेवा कर लो बाकी ईश्वर की मर्ज़ी। पत्नी पूछती थी, मेरे मरने के बाद क्या करोगे, दूसरी शादी कर लेना। ये शब्द बड़े हृदयविदारक लगते थे, मेरा जवाब होता था कि मैं संन्यास ले लूंगा। एक क्षण वातावरण में सन्नाटा छा जाता और हम लोग एक-दूसरे को देख मुस्करा देते।

दिन बीतते गये और एक दिन आत्मा रूपी पक्षी पिंजरा छोड़ उड़ गया। पड़ा रह गया पाँच तत्व का पिंजरा जिसे अब अग्नि के हवाले करना था। चार छोटे बच्चे, आगे लंबा जीवन और जीवन-साथी बिछड़ गया। ज्ञान व कर्मों की गुह्य गति से अन्जान मैं दु:ख के सागर में गोते लगाता रहा। शरीर कमज़ोर होता गया, आत्मा शक्तिहीन हो गई। भय, आशंकाओं ने चारों ओर से घेर लिया, मैं अपने आप से भयभीत रहने लगा। ऐसा लगने लगा कि अब मेरा जीवन भी समाप्त हो जाएगा और बच्चे अनाथ हो जायेंगे। मैं केंद्रीय सरकार के एक संस्थान में पदस्थ था इसलिए पैसे की दिक्कत तो नहीं रही लेकिन जीवन में निराशा का साम्राज्य स्थापित हो गया।

कहते हैं कि जब एक रास्ता बंद होता है तो परमात्मा दूसरा रास्ता खोल देता है। मुझ निराश बच्चे के सिर पर भी उस परमात्मा ने हाथ रख दिया। मैं भटक तो रहा ही था। पूजा-पाठ में मन नहीं लगता था। एक दिन संस्थान के ही एक व्यक्ति ने बताया कि अपनी ही फैक्ट्री में एक व्यक्ति हैं जो हर प्रश्न का सटीक उत्तर देते हैं, आप उनसे मिलें। एक दिन उन महानुभाव से मेरा संपर्क हुआ। वे एक ब्रह्माकुमार भाई थे, नियमित आश्रम जाते थे, उनके साथ मैं भी आश्रम जाने लगा। उन्हीं भाई ने सात दिवसीय कोर्स भी कराया। कोर्स के बाद ऐसा महसूस होने लगा कि अब मेरे जीवन में बहार आने वाली है। जिन खोजा तिन पाइयां। मुझे बहुत अच्छे अनुभव भी हुए और वर्ष 1999 में मुझे माउंट आबू में परमात्मा शिव (बाबा) से मिलन मनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। शांतिवन के डायमंड हॉल में बाबा से प्रथम बार मिलन हुआ।

जैसे सूर्योदय के बाद रात्रि का अंधकार दूर हो जाता है, उसी प्रकार बाबा के मिलन और बाबा की दृष्टि से जीवन में एक नया सूर्य उदय हुआ जिससे निराशा का अंधकार मिट गया। इसी बात का अनुभव मेरे संपर्क के व्यक्ति करने लगे। पहले मैं कमरे में अकेले नहीं रह सकता था,बाथरूम की सिटकनी लगाकर स्नान करने में डर लगता था, बाज़ार अकेले नहीं जा पाता था, ये सब अज्ञात भय मेरे जीवन से दूर हो गये और मैं शांति का अनुभव करने लगा। परमात्मा की एक कृपा और हुई। मेरे निवास के ऊपर वाले क्वार्टर में ब्रह्माकुमारी बहन ने ज्ञान की पाठशाला खोल दी। कॉलोनी के दस-पंद्रह भाई-बहनें आकर साप्ताहिक कोर्स व ज्ञान-मुरली सुनने लगे। कहते हैं, 'अंधा क्या मांगे, दो आँखें', मुझे ज्ञान के दो नेत्र मिले जिससे जीवन में उज्ज्वल भविष्य की राहें स्पष्ट दिखाई देने लगी।

रात के बाद दिन एवं दु:ख के बाद सुख अवश्य आता है। यदि व्यक्ति धीरज धरे एवं परमात्मा पर विश्वास करे तो सब संभव हो जाता है। कर्म की गुह्य गति तो अटल है। कर्मों का भुगतान तो भोगना ही पड़ता है। तो मित्रो, परमात्मा ने मेरे सब दु:ख दूर कर दिए। मैं अपनी सभी धारणाओं सहित परमात्मा से अमृतवेले योग लगाता हूँ, ज्ञान मुरली आश्रम पर सुनता हूँ तथा परमात्मा का परिचय अपने संपर्क में आने वाले लोगों को देता हूँ। अभी तक माया के वार से मैं पराजित नहीं हुआ, मुझे परमात्मा में विश्वास है, वो मेरा सच्चा दोस्त है। मैं उसी से कहता हूँ –

ऐ दोस्त सदा साथ निभाना।
माया के पंजों से मुझे बचाना।।

❖

कला में आध्यात्मिकता का समावेश

• ब्रह्माकुमार गोपालप्रसाद मुद्‌गल, भरतपुर (राज.)

जीवन में शांति और समृद्धि के लिए दुनिया भर के लोग बेचैन हैं। कुछ जंगलों में, कुछ गुफाओं में, कुछ मंदिरों, मस्जिदों, गिरजाघरों, मठों आदि में शांति ढूँढ़ रहे हैं और कुछ तीर्थ-स्थलों का भ्रमण कर रहे हैं। कुछ धन-दौलत कमाकर शांति पाने का स्वप्न देख रहे हैं।

शांति और समृद्धि की,
दुनिया में है खोज।
सबके सब बेचैन हैं,
रोज़-रोज़, हर रोज़।।

बेचैन सभी हैं किन्तु शांति और समृद्धि से कोसों दूर हैं। कारण यही है कि दाँत में दर्द है और इलाज आँख का किया जा रहा है। आइए, सबसे पहले शांति और समृद्धि का वास्तविक अर्थ समझ लें। शांति से तात्पर्य है मन की सुखद अवस्था। सुखद अवस्था से तात्पर्य है निज स्वरूप में टिकना या आत्मस्वरूप में रहना। आत्मा ज्योतिस्वरूप है, आनन्द स्वरूप है, ज्ञानस्वरूप है, शांतस्वरूप है, प्रेमस्वरूप है, पवित्रस्वरूप है, सुखस्वरूप है, शक्तिस्वरूप है। इस स्वरूप में स्थिर रहना ही शांति में रहना है। कोई भी व्यक्ति अशांति, दु:ख या घृणा नहीं चाहता क्योंकि ये आत्मा के मूल गुण नहीं हैं। सागर के किनारे खड़े होकर देखें तो सागर चंचल और क्षुब्ध दिखाई पड़ेगा लेकिन गहराई में उतरने पर पाएंगे कि सागर बिल्कुल शांत है। ठीक यही बात हमारे मन के बारे में है। मन की ऊपरी पर्तों में निरन्तर एक उथल-पुथल-सी दिखाई पड़ती है, मानो यहाँ विषयों की आंधी चल रही हो। हां, मन की गहराई में झाँकें तो हमें क्षोभ के स्थान पर शांति और अविकलता का साम्राज्य दिखाई देने लगेगा। क्या यह संभव है कि हम मन की गहराइयों में चले जाएं और पूर्ण शांति मिल जाए? हाँ, हमारे हाथ में है। बस हमें करना यह होगा कि हम शांति को बाहर न खोजकर भीतर की ओर खोजें।

एक लघुकथा है कि एक बुढ़िया सड़क की रोशनी में रात को कुछ ढूंढ़ रही थी। किसी ने पूछ लिया, दादी, क्या खोज रही हो? बुढ़िया ने कहा, सूई। उसने पूछा – यहीं गुमी थी क्या? बोली, नहीं, गुमी तो मेरी अंधेरी झोपड़ी में थी। उसने पूछा, फिर यहाँ क्यों खोज रही हो? बोली, यहाँ रोशनी है ना। हम भी शान्ति को दुनिया की भौतिक चकाचौंध, शोर, महफ़िल, खाना, बजाना, वैभव, पदार्थ आदि में खोजते हैं पर वहाँ वह गुमी नहीं तो मिले कैसे? वह तो अन्दर गुमी है, वहीं अनुभव कीजिए। इसी प्रकार समृद्धि का शाब्दिक अर्थ है सम्पन्नता, भौतिक सम्पन्नता और आध्यात्मिक सम्पन्नता। भौतिक सम्पन्नता में रोटी, कपड़ा, मकान तो आते ही हैं किन्तु ज़मीन, जायदाद, आभूषण, फ्रीज़, कूलर, कार, मोबाइल, आमोद-प्रमोद, खेल-कूद, भोग-विलास आदि के साधन भी इसकी परिधि में आते हैं। आध्यात्मिक सम्पन्नता से तात्पर्य है आत्मा और परमात्मा के संबंध में चिंतन-मनन करना। दूसरे शब्दों में दिव्य गुणों को धारण करना और आसुरी स्वभाव को छोड़ना तभी जीवन हीरे तुल्य बन सकता है। अत: पवित्रता, अन्तर्मुखता, सहनशीलता, एकाग्रता, गुणग्राहकता, अर्पणमयता, मधुरता, हर्षितमुखता, निर्भयता, साक्षीभाव, नम्रता, सरलता, दृढ़ता, आत्मविश्वास, पुरुषार्थ में तीव्रता आदि गुणों का होना ही आध्यात्मिक समृद्धि है।

आध्यात्मिक समृद्धि के लिए प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय, आबू पर्वत का साहित्य और ब्रह्माकुमार तथा ब्रह्माकुमारियों का अनुभूतिपरक चिन्तन सशक्त माध्यम है। इस चिन्तन के केन्द्र में है स्वप्रेम, परमात्म प्रेम और समस्त रचना से प्रेम। इन तीनों को समझ लेना अति आवश्यक है।

स्वप्रेम – स्वप्रेम से तात्पर्य है अपने से प्रेम यानि आत्मप्रेम। शरीर और आत्मा दोनों को सतोप्रधान बनाना। अमृतवेले जागना, शुद्ध अन्न खाना, सद्व्यवहार करना, इन्द्रियों को अनुशासित रखना आदि शारीरिक सतोप्रधानता की परिधि में आते हैं। आत्मिक सतोप्रधानता से तात्पर्य है मन के विचारों को तमो से रजो और रजो से सतोगुण की ओर अग्रसर करना। बुद्धि को विकारों के प्रभावों से मुक्त रखकर परमात्म संग में हंस बुद्धि

बनाना, दिव्य बनाना। इससे हमारे संस्कार सतोप्रधान अर्थात् देवी-देवताओं जैसे बन जाएँगे। आज भी किसी देवी या देवता की प्रतिमा देखते हैं तो असीम सुख, शांति और परम समृद्धि का अनुभव होता है, ज़रूर देवी-देवताओं ने उक्त गुणों को स्वरूप में लाया है तब हमें उनसे शांति और समृद्धि की अल्पकालीन अनुभूति होती है।

परमात्म प्रेम – हमारा मन परमात्मा के प्रति हो, परमात्मा से लगाव हो, जुड़ाव हो। इसके लिए अलग प्रयास की आवश्यकता नहीं है। यदि हमने स्वप्रेम सीख लिया है तो परमात्म प्रेम स्वतः ही होगा। संसार में रहकर उस परमपिता को याद करना, निरंतर ध्यान में रखना ही परमात्म प्रेम है इसलिए कहा गया है,

कर ते कर्म करो विधि नाना।
मन राखो जहँ कृपानिधाना।।

कलाकार परमात्म प्रेम से ओत-प्रोत होकर सृजन करेगा तो शांति और समृद्धि, जो खो गई हैं, उन्हें पुनः प्राप्त किया जा सकेगा।

परमात्म रचना से प्रेम – समस्त रचना ईश्वर की रचना है। उससे अपनत्व रखना, उनके कष्ट को अपना कष्ट समझना, उनका सहयोगी बनना अर्थात् परमात्म रचना से प्रेम करना है। हम कलाकारों को ऐसी कला रचनी है कि सभी स्वप्रेम, परमात्म प्रेम और उसकी रचना से प्रेम करने की ओर सतत् अग्रसर हों। परमात्म रचना से प्रेम के लिए आवश्यक है, सभी के प्रति शुभभावना और शुभकामना कि सभी का भला हो, सब सुख पाएं। सभी के प्रति ऐसी दृष्टि, वृत्ति हो कि सभी आत्मिक उन्नति को प्राप्त करते रहें। प्रेम जैसे उदात्त गुण को जागृत करना कला और संस्कृति ही तो सिखाती हैं। कला आत्म-साक्षात्कार और परमात्म-अनुभूति के लिए श्रेष्ठ और सशक्त माध्यम है। संस्कृति मानव को उच्च संस्कार प्रदान करती है। यह मानवीय मूल्यों का पोषण भी करती है। यह सर्वविदित है कि कला स्वर्णिम कल के निर्माण के लिए आज आवश्यक है। इसीलिए कलाकारों का हर युग में आह्वान होता रहा है। कलाकारों के पास प्रतिभा होती है। यह जन्मजात ईश्वर प्रदत्त शक्ति है, जो सहज सबके दिल और दिमाग में उतर जाती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि शांति और समृद्धि के लिए कलाकारों का सहयोग सार्थक और सफल रहा है। संतों की वाणियों, ऋषियों की ऋचाओं, कवियों की कविताओं, लेखकों के लेखों, चित्रकारों के चित्रों, मूर्तिकारों की मूर्तियों ने ऐसा असरदार प्रभाव छोड़ा कि विश्व के जन-जन में सुख, शांति और समृद्धि ने प्रश्रय पाया है।

कलाकार अपनी कलाओं से कालजयी बन गए हैं, आज भी हैं और आगे भी रहेंगे। आज का युग भीषण तनाव से गुज़र रहा है, आतंकवाद का चारों ओर बोलबाला है। ग्यारह सितम्बर को जब वर्ल्ड ट्रेड सेन्टर पर आतंकवादियों ने हमला कर उसे ध्वस्त कर दिया तो सुखी और समृद्ध देश अमेरिका अशान्त हो उठा और आज तक अशान्त है। ऐसे संकटमय काल में कलाकार ही अपनी कालजयी सृजनशील कला से शांति का सुखद पैगाम दे सकता है।

कला करे सबका भला,
वही कला सिरमौर।
जग में इससे बढ़कर,
कोई कला न और।।

यह स्पष्ट है कि वर्तमान में कला और संस्कृति का ह्रास हुआ है। आज की व्यवसायिक मानसिकता, उपभोक्तावादी संस्कृति और कुसंस्कारों ने सब ख़त्म कर दिया है।

भौतिकता से क्षणिक सुख
पाता है इन्सान।
शांति और समृद्धि को लिए
कला बने वरदान।।
कला संस्कृति में हुआ,
आध्यात्मिकता का ह्रास।
यह समाज के पतन का,
सचमुच कारण खास।।

तभी तो कलाकारों का आह्वान किया गया है। वे आगे आएँ और अपनी कला से समाज को आचरण में शुचिता और पवित्रता लाने का सुखद संदेश दें। वास्तव में, पवित्रता, सुख और शांति स्थापित करना कलाकार का परम लक्ष्य है, बस प्रयास यह करना है कि अपनी कला में आध्यात्मिकता का समावेश करें, फिर तो शांति का साम्राज्य होगा। संस्कार परिवर्तन में कला को भी अपनी श्रेष्ठ भूमिका निभानी है, यही समय की पुकार है और यही मानवीय युगधर्म है। ❖

गतांक से आगे ...

असत्य से सत्य की ओर

• ब्रह्माकुमार सत्यवीर सिंह डागर, दिल्ली

पिछले अंक में आपने पढ़ा कि लेखक, पुलिस विभाग में कार्यरत रहते भी, पहले जिन कार्यों को डंडे की नोक से संपादित करते थे, उन्हीं कार्यों को अब ईश्वरीय ज्ञान और योगबल से संपन्न करने लगे। ज्ञान-योग के अभ्यास के साथ-साथ ईश्वरीय सेवा के सुअवसर भी प्राप्त होने लगे और हर कार्य में निमित्त भाव धारण कर, खुदा दोस्त के साथ का अनुभव करते हुए सफलता के जन्मसिद्ध अधिकार को प्राप्त करने लगे। समस्याएँ भी आईं पर समाधान भी मिलते गए। पढ़िए, आगे क्या हुआ .... सम्पादक

नोएडा का निठारी काण्ड

आपको याद होगा वर्ष 2007 में निठारी कांड प्रकाश में आया था। नोएडा के पास निठारी गाँव से बहुत सारी लड़कियाँ एक-एक करके पिछले कई सालों से गायब होती जा रही थीं। वर्ष 2007 में यह भेद खुला कि नोएडा की एक कोठी में उन का यौन शोषण किया गया और बाद में उन्हें मारकर उनका मांस-भक्षण किया गया। उनकी हड्डियों और अवशेषों को कोठी के पीछे बने एक गंदे नाले में दफन कर दिया गया था। यह खबर उन दिनों सभी समाचार पत्रों और टी.वी. चैनलों की सुर्खियाँ बनी हुई थी।

इन्हीं दिनों अमृतवेले बाबा ने मुझे कहा कि बच्चे, तुम उस कोठी के पीछे उस नाले पर, जहाँ पर उन बच्चियों को दफन किया गया था, फ़रिश्ता बनकर जाओ और उन्हें सुख, शान्ति, प्रेम और आनन्द की सकाश दो। उनकी मौत बहुत दर्दनाक तरीके से हुई है। बच्चे, वे आत्मायें दु:ख और अशांति से तड़प रही हैं। मैंने कहा, जो आज्ञा बाबा।

मैं उसी वक्त मन-बुद्धि द्वारा सूक्ष्म रूप से उस कोठी की छत पर फ़रिश्ते रूप में पहुँचा तो वे आत्मायें मुझे ऐसे लग रही थीं जैसे चिड़िया के अण्डे से अभी-अभी निकले हुए बच्चे होते हैं। वे मुझे कोठी की छत पर देखकर ऐसे व्याकुल हो उठीं और चोंच ऊपर को उठाकर ऐसे चीं-चीं करने लगीं जैसे चिड़िया के बच्चे अपनी माँ को देखकर चुग्गा लेने के लिए चीं-चीं करने लगते हैं। मैंने उन्हें बहुत प्यार से और बहुत रहम की भावना से सुख, शांति, प्रेम और आनन्द का सकाश दिया। धीरे-धीरे वे आत्माएँ शांत हो गईं। यह सब देखकर बहुत संतोष मिला। मैं बहुत खुश हुआ। जब मैं सूक्ष्म में वापस अपने विश्राम-कक्ष में आया तो बाबा ने कहा, देखा बच्चे! वे आत्मायें कितनी दुखी और अशांत थीं और तुमसे सकाश पाकर कितनी सुखी और शांत हो गईं। मैंने कहा, हाँ बाबा, देखा। तो बाबा ने कहा कि बच्चे, तुम्हें उन आत्माओं की यह सेवा रोज़ करनी है, जब तक कि वे पूरी तरह से तृप्त न हो जायें। मैंने कहा, ठीक है बाबा।

फिर बाबा ने कहा, बच्चे, आजकल दुनिया में जगह-जगह आत्मायें कहीं दुर्घटना में तो कहीं प्राकृतिक प्रकोप के कारण शरीर छोड़ रही हैं। तुम जहाँ कहीं भी समाचार-पत्रों या टेलिविजन में ऐसी खबर देखो तो इसी प्रकार फ़रिश्ता बनकर वहाँ जाकर उन को दुख और अशांति से मुक्ति प्रदान करो। यह सबसे उत्तम सेवा है बच्चे! मैंने कहा, ठीक है बाबा, मैं ऐसा ही करूँगा।

मैं एक हफ़्ते तक रोज़ नोएडा की उस कोठी पर जाकर फ़रिश्ता रूप से उन आत्माओं को अमृतवेले सकाश देता रहा। हफ़्ते बाद मुझे लगा कि वे पूरी तरह तृप्त और संतुष्ट हैं। सुख, शांति और आनन्द में हैं। तब से मैं जब भी कहीं अनेक आत्माओं द्वारा शरीर छोड़ने का समाचार सुनता हूँ तो नियमित रूप से यह सेवा करता हूँ। इस प्रकार की सेवा करने से मुझे बेहद खुशी और संतुष्टि मिलती है।

स्वप्न से मिली शिक्षा

एक दिन मैंने सपना देखा कि मैं अपने घर पर हूँ। एक सफेद वस्त्रधारी कोचवान मुझे लेने आया और कहा

कि बड़े बाबा ने आपके लिए स्वर्ग से उड़न खटोला भेजा है, आपको अभी स्वर्ग में चलना है। मैं बहुत खुश हुआ और उनके साथ चल दिया। बहुत ही सुन्दर सफेद रंग का उड़न खटोला घर से थोड़ी दूर खुले मैदान में खड़ा था। जैसे ही मैं उस की तरफ आगे बढ़ा तो अचानक एक बन्दर ने मेरा रास्ता रोक लिया। मैंने आगे बढ़ना चाहा तो वह मेरे से गुत्थम गुत्था हो गया। वहाँ दो डंडे पड़े हुए थे। मैंने और बंदर ने एक-एक डंडा उठा लिया। डंडों से हम दोनों की बहुत लड़ाई हुई। आखिर बंदर मारा गया। उसके मरते ही एक और बंदर आ गया। वह पहले वाले से ज़्यादा तगड़ा था। उसके साथ भी डंडों से लड़ाई हुई और आखिर वह भी मारा गया। अब वहाँ और कोई बंदर या रुकावट नहीं थी। मैं निश्चिन्त हो गया तो मैंने डंडा फेंक दिया और तेज़ी से उड़न खटोले के पास पहुँचा।

कोचवान ने दरवाजा खोला। मैंने एक पैर अन्दर रखा, दूसरा पैर उठाकर अंदर रखने वाला ही था कि एक नेवले ने उसे टखने से पकड़ लिया। उसकी पकड़ इतनी मजबूत थी कि मैं पैर नहीं उठा सकता था। नेवला मेरी पूरी कोशिश के बाद भी पैर छोड़ ही नहीं रहा था। मैं डंडा भी पीछे ही फेंक आया था। जब तक नेवला पैर न छोड़े तो उड़न खटोला उड़े कैसे? कोचवान तमाशा देख रहा था। उसकी ड्यूटी मुझे लेकर जाने की थी बस! आखिर मैंने एक हाथ से नेवले का ऊपर का जबड़ा और दूसरे हाथ से नीचे का जबड़ा पकड़ा और उसका मुँह फाड़ दिया। नेवला भी मर गया। तब मैंने उड़न खटोले का दरवाज़ा बंद किया और स्वर्ग के लिए उड़ गया।

ब्राह्मण बहन-भाई समझ सकते हैं कि प्यारे बाबा ने इस सपने के द्वारा हमें क्या शिक्षा दी है? माया अंतिम समय तक भी पीछा नहीं छोड़ेगी। वह किसी न किसी रूप में हमारे सामने विघ्न बनकर आती ही रहेगी। बाबा मुरलियों में साँप-सीढ़ी के खेल का भी उदाहरण देते हैं। कोई भी यह समझने की भूल न करे कि मैं तो अब 99.99% संपूर्ण बन ही गया हूँ। माया अब मेरा क्या करेगी? मेरी तो सूर्यवंशी घराने में सीट पक्की है। मगर नहीं है। इसलिए बाबा अभी नंबर आउट नहीं करते। अंतिम पेपर हम सबके सामने बिल्कुल ही आखिर में आना है। इसलिए अटेन्शन प्लीज़!

प्यारे बाबा की कमाल

वर्ष 2007 के आखिर की बात है। शाम को लगभग 6 बजे मैं थाना प्रीत विहार में अपने ऑफिस में बैठा था। एक बच्चे के माता-पिता थाने में आये और मुझे बताया कि उनका लड़का, उम्र 14 साल, स्कूल से लौटकर नहीं आया। सब जगह तलाश कर लिया, कहीं नहीं मिला। मैंने उन्हें बिठाया। अभी उनसे बात कर ही रहा था कि एक और माता-पिता ने अपने बच्चे, उम्र 12 साल, की गुमशुदगी के बारे में आकर बताया। यह बच्चा भी उसी स्कूल का था परन्तु अलग क्लास का था। उन्हें भी बिठाया। थोड़ी देर बाद उसी स्कूल के एक तीसरे बच्चे, उम्र 16 साल, के माता-पिता आये। उनको भी बिठाया। तीनों बच्चे एक ही स्कूल के थे इसलिए ऐसा लगता था कि तीनों इकट्ठे ही गये हों। अगले 15 मिनट में तीन और बच्चों के माता-पिता और परिजन एक-एक करके थाने में आये और अपने-अपने बच्चों की गुमशुदगी के बारे में बताया। इस प्रकार एक घंटे के अन्दर छह बच्चों की गुमशुदगी की रिपोर्ट थाने में आई। देखते ही देखते इन सभी बच्चों के माता-पिता के अतिरिक्त उनके दोस्त, रिश्तेदार, पड़ोसी थाने में इकट्ठे हो गये।

नोएडा का निठारी काण्ड अभी भी सुर्खियों में था। लोगों ने इसको एक और निठारी काण्ड कहना शुरू कर दिया। चारों ओर शोर, हंगामा और रोना-पीटना शुरू हो गया। लोग मुझ पर चीख-चिल्ला रहे थे। कहते थे कि आप कुछ करते क्यों नहीं? ऐसे मामलों में पुलिस की जो आवश्यक कार्यवाही होती है, वो तो मैं कर ही चुका था परन्तु लोग उससे संतुष्ट नहीं थे। मामले की गंभीरता को देखते हुए मैंने अपने वरिष्ठ अधिकारियों को इसकी सूचना भी दे दी थी। गनीमत यह थी कि अभी तक मीडिया को यह खबर नहीं मिली थी।

मैंने भी 26 साल की नौकरी में कभी भी इतने बच्चों की गुमशुदगी एक साथ नहीं देखी थी और न ही कभी सुनी थी। मुझे भी किसी अनहोनी की आशंका होने लगी। मेरे ऑफिस

की टेबल पर बाबा का चित्र लगा हुआ था। मैंने बाबा से मुख़ातिब होकर मौन भाषा में प्रार्थना की कि बाबा इन बच्चों का कोई अहित ना हो, ये बच्चे सही सलामत अपने माता-पिता को मिल जायें। बाबा, आपके बच्चे को कोई रास्ता नहीं सूझ रहा है, बाबा अब आप ही मदद करो।

अभी मैंने अपनी प्रार्थना समाप्त ही की थी कि एक बच्चे की माँ के मोबाइल फोन पर उसके बच्चे का फोन आया और उसने 'माँ' कहकर फोन काट दिया। अब तो और ही हंगामा हो गया। लोग कहने लगे कि बच्चा जरूर किसी मुसीबत में है। वह बात करना चाहता है परन्तु बदमाशों ने उससे फोन छीन लिया, बात नहीं करने दी। मुझे बाबा पर पूरा भरोसा था। मैंने उस बहन के मोबाइल से, आने वाला नंबर लेकर, अपने मोबाइल से मिलाया तो पता चला कि वह मेरठ रोडवेज बस अड्डे के सामने के एक पी.सी.ओ. का था। मैंने अपना परिचय देकर पी.सी.ओ. वाले भाई से पूछा कि किसी बच्चे ने अभी यहाँ से दिल्ली फोन किया था क्या, वह बच्चा कहाँ है? उसने बताया कि वह तो चला गया। मैंने उससे बाहर निकलकर देखने का अनुरोध किया तो उसने आनाकानी की।

इसी बीच यू.पी. पुलिस का एक हवलदार वहाँ पहुँच गया जो पुलिस चौकी, रोडवेज बस अड्डा, मेरठ पर ही तैनात था। उस पी.सी.ओ. वाले ने मेरी उस हवलदार से बात करायी। मैंने संक्षिप्त में उसे सारी बात बताकर बस अड्डे के आसपास बच्चे को देखने का अनुरोध किया। बच्चे की स्कूल ड्रेस और हुलिया भी बता दिया। करीब पाँच मिनट बाद ही तीनों बच्चे, जो एक ही स्कूल के थे, उस हवलदार को मिल गये, जो हरिद्वार की बस में चढ़ने वाले थे। वह हवलदार उन तीनों बच्चों को पुलिस चौकी में ले गया और मुझे फोन से सारी बात बताई।

थोड़ी देर बाद एक आदमी छह साल के एक बच्चे को लेकर हमारे पास थाने में आया। उसने बताया कि बच्चा उसे सड़क पर रोता हुआ मिला है। बच्चा अपना पता ठीक से नहीं बता पाया इसलिए थाने लेकर आ गया। थोड़ी देर में ही एक बच्चा हमारे ही थाने के एक सिपाही को मिल गया और एक गीता कालोनी के एरिया में वहाँ बीट के सिपाही को मिल गया।

जितने आश्चर्यजनक ढंग से छह बच्चे गुम हुए उतने ही आश्चर्यजनक ढंग से छह के छह आधे घंटे में मिल गये। लोग कह रहे थे, अजीब इत्तफ़ाक़ है। बच्चे जैसे गुम हुए, वैसे मिल भी गये। मैं जानता हूँ कि छह बच्चों का एक साथ गुम होना तो बेशक एक अजीब इत्तफाक है परन्तु उन सभी का इस प्रकार एक साथ मिल जाना, वो भी अलग-अलग जगह से, एक ही समय पर और अलग-अलग प्रकार से, यह इत्तफ़ाक़ कतई नहीं हो सकता। यह तो प्यारे बाबा की कमाल है जो कभी भी अपने बच्चों को निराश नहीं करते। वे सदा साथ हैं और सदा मददगार हैं।

(समाप्त)

ज्ञानामृत मेरी प्यारी सहेली

अन्नपूर्णा नेताम, बोरगांव (छ.ग.)

ज्ञानामृत मेरी प्यारी सहेली, इसकी हर मूर्त नई नवेली
बन माली रूहों को सींचे, जीवन में लाए हरियाली
मीठी प्यारी इसकी बोली, पाप भस्म करने की गोली
बोझ उतारे सारे मन के, कहे, करो हो ली सो हो ली
दिव्यता का इत्र इस में, ज्ञान-गुणों की है रंगोली
सबको प्यार लुटाती रहती, सब कहते हैं बड़ी भली
ज्ञानामृत मेरी ....

एक दिन आई और मुस्काई, मेरे कानों में यूँ बोली
तू अन्नपूर्णा, तू ही दुर्गा, तू ही नारी शक्तिशाली
संपादक की कलम प्रेरती, करो दिखावे से मन खाली
रमेश भाई के संग खेलते चारों युगों की हम बाजोली
क्या-क्या वर्णन करूँ, सभी के लेख बड़े ही शक्तिशाली
इसके मन में भेद नहीं है, हो महानगर या छोटे गाँव की गली
ज्ञानामृत मेरी ....

फिर कब बनेंगे लोहे से सोना?

• ब्रह्माकुमार रामसिंह, रेवाड़ी

एक गाँव में रामदीन नाम का एक आलसी ब्राह्मण यह मानकर चलता था कि जो कुछ मिलता है वह भाग्य से ही मिलता है। वह मेहनत करने में विश्वास नहीं रखता था। एक दिन एक साधु ने उसकी पत्नी के आदर-सत्कार से खुश होकर उसे सात दिनों के लिए पारस पत्थर दिया और कहा – आठवें दिन मैं इसे वापस ले जाऊँगा। इन सात दिनों में तुम जितना सोना बनाना चाहो, बना लेना।

रामदीन को अपने घर में थोड़ा लोहा मिला, उसी को सोना बना कर बेच आया और कुछ घर के लिए सामान भी खरीद लाया। दूसरे दिन पत्नी के बहुत कहने पर बाज़ार में लोहा खरीदने गया परन्तु महंगा लगा तो ऐसे ही वापस लौट आया। दो-तीन दिन बाद पता चला कि लोहा तो अब और भी महंगा हो गया है। इसी बीच सात दिन पूरे हो गए। आठवें दिन साधु ने पारस पत्थर मांगा। रामदीन ने कहा – महाराज, कृपया इस पारस पत्थर को कुछ दिन के लिए मेरे पास और छोड़ दीजिए। साधु ने कहा – तुम्हारी जगह और कोई होता तो कुछ का कुछ कर डालता। जो आदमी समय का सदुपयोग नहीं जानता वह हमेशा दुखी रहता है। रामदीन पछताने लगा परन्तु अब कर क्या सकता था क्योंकि समय हाथ से निकल चुका था और साधु पारस पत्थर लेकर जा चुका था।

सही अर्थों में देखा जाये तो पारस नाम का कोई पत्थर होता ही नहीं है। परन्तु कहानी में इसका उदाहरण देकर मानव को यह समझाने का प्रयास किया गया है कि समय का सदुपयोग करने वाला व्यक्ति अपने लोहे जैसे भाग्य को सोने जैसा बना सकता है। कुछ पाने का समय निश्चित होता है। उसी निर्धारित समय में वो प्राप्ति हो सकती है, आगे-पीछे नहीं हो सकती। अब देखिए, वर्तमान समय परमपिता परमात्मा शिव साकार आधार लेकर सृष्टि पर अवतरित हो चुके हैं। वर्तमान समय चल रहे संगमयुग के कल्याणकारी समय में उन्होंने हम सब मनुष्यात्माओं को ईश्वरीय ज्ञान रूपी पारस प्रदान किया है। साधु ने तो मात्र सात दिन दिए थे पर परमात्मा पिता तो पिछले 72 वर्षों से मानव को यह मोहलत दिए हुए हैं कि वह **स्वयं** को, **समय** को और **संयम** को पहचानकर ईश्वरीय ज्ञान रूपी पारस से अपने कुसंस्कारों को श्रेष्ठ संस्कारों में बदलकर आने वाली सतयुगी दुनिया में राज्य भाग्य का अधिकारी बने। वह यह ना सोचे कि मेरे भाग्य में होगा तो मुझे मिल जाएगा। अक्सर, आध्यात्मिक पुरुषार्थ की बात आने पर व्यक्ति यही उत्तर देता है कि भाग्य में होगा तो कर लूँगा। परन्तु भाग्य की प्राप्ति के लिए भी पहले पुरुषार्थ चाहिए, नहीं तो साधु ने जैसे आठवें दिन पारस पत्थर वापस मांग लिया था, इसी प्रकार संगमयुग का समय पूरा होते-होते पाँचों तत्व तथा पाँचों विकार विकराल रूप धारण कर लेंगे। इनकी रिहर्सल तो कब की शुरू हो चुकी है। **महाविनाश का बिगुल कभी भी बज सकता है। तब समय हाथ से निकल जायेगा और पछतावे के अलावा कुछ नहीं बचेगा। फिर लोहे के लोहे ही बने रह जायेंगे, सोना अर्थात् पवित्र नहीं बन पायेंगे, पापों का विनाश नहीं हो पायेगा और धर्मराज की सज़ायें भी बहुत खानी पड़ेंगी। आत्मा को सच्चा सोना बनाने के लिए आप अपने नज़दीकी ब्रह्माकुमारी आश्रम पर निःशुल्क संपर्क कर सकते हैं और अब थोड़े से बचे हुए समय को परमात्मा के आदेश प्रमाण सफल कर सकते हैं।**

❖

बेहतर विश्व के निर्माण का स्वप्न संजोये है आबू

• विजय सहगल, पूर्व संपादक, दैनिक ट्रिब्यून

राजस्थान की एकमात्र पर्वत नगरी माउंट आबू जाने के अनेक आकर्षण हो सकते हैं। अरावली पर्वतमाला का सिरमौर आबू, पर्यटन की दृष्टि से हर वर्ष लाखों पर्यटकों को आकृष्ट करता ही है पर उसका आध्यात्मिक सम्मोहन कहीं अधिक दिलकश है। हालांकि माउंट आबू कई दशकों से प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की गतिविधियों का केंद्र बना रहा है। इसने विश्व शांति, आध्यात्मिक सद्‌भाव, तप और त्याग के नजरिये से जो कुछ समाज को दिया है, वैसी मिसाल और जगह कम ही मिलती है। मान्यता तो यह है कि कभी सभी तैंतीस करोड़ देवी-देवता यहाँ वास करते थे। पूर्व में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के निमंत्रण पर तीन बार माउंट आबू जाना हुआ है। इस बार प्रयोजन था, 'मूल्यनिष्ठ समाज के लिए मीडिया' विषय पर राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार में शामिल होने का अर्थात् विचार मंथन के साथ-साथ विश्राम के अवसर का भी। एक हाथ में दो-दो लड्डू। आज जबकि बदलते हुए सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मीडिया की भूमिका पर देश-भर की निगाहें टिकी हैं, राजयोग शिक्षा एवं शोध प्रतिष्ठान के मीडिया प्रभाग द्वारा ज्ञान सरोवर में आयोजित चार दिवसीय सेमिनार कई मायनों में महत्त्वपूर्ण रहा। इसके लिए बेहतर विश्व के लिए ज्ञान सरोवर स्थित अकादमी से अधिक शांतिपूर्ण स्थल और क्या हो सकता था जहाँ सैकड़ों मीडियाकर्मी एक साथ विचार मंथन के लिए जुटे थे जैसे कुछ दिन के लिए स्वयं ज्ञान-गंगा वहाँ अवतरित हुई हो। इस भीड़ में से कितने लोग सही मायनों में मूल्यनिष्ठ पत्रकारिता से जुड़ी चिंता में लीन रहे होंगे, यह एक जुदा सवाल है। इसके बावजूद, यह आयोजन बेहतर विश्व के निर्माण की दिशा में कुछ तरंगें जरूर पैदा कर सका।

इस बार करीब पाँच वर्ष बाद माउंट आबू जाना हुआ था। हालाँकि माउंट आबू अपनी अलौकिकता पहले की तरह ही बनाये हुए था पर मन भीतर से यह सोचकर सहमा हुआ था कि यह परिसर दादी प्रकाशमणि जी के बिना कैसा लगेगा। पिछले वर्ष जिन दिनों प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की पूर्व मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणि जी, देह त्याग कर ब्रह्म में लीन हुई थीं, हम लोग कनाडा थे। इंटरनेट पर यह समाचार पाकर एक धक्का-सा लगा था। अब तक तो देश उनकी प्रथम पुण्यतिथि मना चुका है। हम जब भी माउंट आबू आये, मीडियाकर्मियों को दादी जी का अपनत्व भरा स्नेह मिलता रहा। उनका स्थान

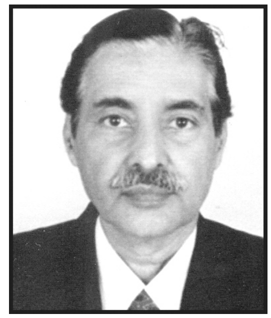

राजयोगिनी दादी जानकी जी ने ग्रहण किया है। सेमिनार के हर प्रमुख आयोजन पर सभी को उनका सान्निध्य प्राप्त रहा। बार-बार लगता रहा कि दादी जानकी जी, दादी प्रकाशमणि जी की ही प्रतिमूर्ति हैं। चेहरे पर वही दिव्यता, वही स्नेह और वही चिरपरिचित मुस्कान। दादी मानती रही थीं कि सामाजिक परिवर्तन व बेहतर विश्व के निर्माण में मीडिया सकारात्मक भूमिका निभा सकता है। दादी जानकी भी उसी मत की हैं। वे मानती हैं कि मीडिया को सनसनी, हिंसा व नकारात्मकता की बजाय सकारात्मक बदलाव को अधिमान देना चाहिए। यह भी कि अध्यात्म को समाज की भलाई के लिए और आगे आना होगा। ज़रूरी नहीं कि इसके लिए मीडिया कोई चोला धारण कर कमंडल उठाता फिरे, कलम ही उसकी तपस्या और पहचान है।

वे मई के अंतिम दिन थे। राजधानी एक्सप्रेस ने सुबह साढ़े छह

बजे आबू रोड स्टेशन पर उतार दिया था। माउंट आबू तक पहुँचने में हमें एक घंटा लग गया था। इस दौरान पीछे छूटता मैदानी इलाका और ऊँचाई के साथ-साथ निखरता प्राकृतिक सौंदर्य और अधिक रोमांचक प्रतीत हो रहा था। घुमावदार सड़क आपको शिखर तक ले जाती है। लंबे सफर के बाद मधुबन (प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय) और उसके बाद ज्ञान सरोवर पहुँच कर लगता है जैसे हम स्वर्ग में आ गये हों। एक ऐसा स्वर्ग जहाँ मानसिक शांति की अनुभूति होती है। समुद्र तल से माउंट आबू की ऊँचाई करीब 4000 फीट है। यहाँ विश्व विद्यालय के भव्य परिसर व अन्य इकाइयों के अलावा नक्की झील, भव्य बाज़ार व पौराणिक महत्त्व के अनेक स्थल आगंतुकों के आकर्षण का केंद्र हैं। इसके अलावा 'जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ' की तर्ज पर यहाँ प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के रूप में वह ज्ञान-गंगा प्रवाहित है जो मनुष्य को अध्यात्म की ओर ले जाती है। दादी जानकी के अनुसार, राजयोग इसी का एक माध्यम है। ज्ञान सरोवर में मीडिया मंथन व आध्यात्मिक मंत्रणा के बीच दिन कैसे गुज़रे, यह बयान नहीं किया जा सकता। यहाँ जो भी मुद्दे सामने आये उनसे यह जाहिर होता है कि आज विश्व, मीडिया की भूमिका और मूल्यों के पतन को लेकर बहुत चिंतित है परंतु उससे हमें उबारेगा कौन? उसके लिए संपूर्ण मीडिया को दोषी ठहराना गलत होगा। आज भी ज़्यादातर लोग मानते हैं कि समाज की साख सत्यनिष्ठ मीडिया पर टिकी है। यह अलग बात है कि तालाब को गंदला करने के लिए एक ही मछली काफी रहती है। दादी जानकी ने एक दिन अपने संबोधन में स्पष्ट कहा कि मीडिया समाज को सही दिशा देने की ताकत रखता है। समाज के कल्याण के लिए उसे इस ब्रह्मास्त्र का इस्तेमाल करना चाहिए। उन्होंने मीडिया को 'खुशखबर', 'गुड न्यूज़' को बढ़ावा देने का परामर्श भी दिया।

मीडिया को इस सेमिनार के दौरान अध्यात्म व मीडिया की कई हस्तियों से मेल-मिलाप का अवसर उपलब्ध हुआ। नहीं तो मीडिया वाले इतनी फुर्सत में कहाँ होते हैं? एक दिन हम विश्व विद्यालय द्वारा संचालित ग्लोबल हॉस्पिटल भी हो आये थे जहाँ संस्थान के प्रभारी डॉ. प्रताप मिड्ढा से मिल कर अच्छा लगा। इस अस्पताल ने क्षेत्र के लोगों को आधुनिकतम चिकित्सा सुविधा प्रदान करने की पहल की है। माउंट आबू में हजारों ब्रह्माकुमार व तपस्विनी ब्रह्माकुमारियाँ सेवा व साधना के माध्यम से बेहतर विश्व के निर्माण तथा राजयोग के प्रति समर्पित हैं। इसकी शिक्षा उन्हें प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के संस्थापक दादा लेखराज (प्रजापिता ब्रह्मा) से मिली है जिनके सिद्धांतों पर यह संस्था बराबर चलती रही है। दुनिया में सौ से अधिक देशों में इसके आठ हजार केंद्र से अधिक केंद्र हैं।

हम जब पहली बार माउंट आबू गए थे तब यह परिसर तलहटी व मधुबन तक सीमित था। पंजाबी ट्रिब्यून के तत्कालीन संपादक हरभजन सिंह हलवारवी भी हमारे साथ थे। अब इस परिसर का विस्तार ज्ञान सरोवर से और आगे, पीस पार्क तक हो चुका है। बेहतर विश्व के निर्माण हेतु अकादमी वाले क्षेत्र अर्थात् ज्ञान सरोवर को हमने बनते देखा है। वर्षा जल का संचय करने वाले दो सरोवर खूबसूरती के साथ-साथ जल संग्रह व बिजली उत्पादन का काम करते हैं। इन दिनों यदि आप माउंट आबू के आसपास के ग्रामीण क्षेत्रों में चले जायें तो आपको सामाजिक विकास के दर्शन हो सकते हैं। इनमें पर्यावरण संरक्षण, सौर-ऊर्जा, वन विकास, साक्षरता व स्वास्थ्य रक्षा के अलावा नारी सशक्तिकरण के विस्तार के संकेत भी मिलते हैं। यह प्रगति इस बात की परिचायक है कि अध्यात्म और मानव कल्याण जैसे विषय एक-दूसरे के पूरक हो सकते हैं बशर्ते कि उन्हें इसी तरह एक साथ लेकर चला जाये। ❖

ईश्वरीय ज्ञान ऐसी परम औषधि है जो आधि और व्याधि दोनों का अंत करती है

प्रकृति की गोद

• ब्रह्माकुमारी प्रभा मिश्रा, शान्तिवन

आज चारों ओर प्रतिस्पर्धा का बोलबाला है, मनुष्य पागलों की तरह भौतिकता की ओर बढ़ रहा है। उसके मन में संकल्पों का ज्वालामुखी फट रहा है। ऐसे में हम गहराई से सोचें कि ऋषि-मुनि जंगलों में तपस्या करने क्यों जाते थे? क्योंकि वहाँ उन्हें प्रकृति का सान्निध्य प्राप्त होता था। खुले आसमान के नीचे, पाँच तत्वों का बना शरीर और हरी-भरी प्रकृति, दोनों आमने-सामने होते तो विचारों में विशालता, महानता आना स्वाभाविक हो जाता था। पहले ज़माने में लोगों के घरों की छतें काफी ऊँची हुआ करती थी, उनके विचार भी ऊँचे हुआ करते थे। आज मनुष्यों की संख्या बढ़ी है तो विचारों की संकीर्णता भी बढ़ी है। यह संकीर्णता ही मनुष्य को मनुष्य से तोड़ रही है। घर और छतें छोटी हो गई हैं, दिल छोटे हो गये हैं और हो गये हैं छोटे विचार, स्वार्थ से भरपूर।

यदि कोई साल दो साल में किसी पर्वतीय स्थान पर या प्राकृतिक जल प्रपातों के पास जाता भी है तो केवल कुछ घंटों के लिये। यह भी एक फैशन बन गया है इसलिये मनुष्य का उठना-बैठना-बोलना-मुस्कराना सब बनावटी हो गया है। वह बनावटी दुनिया को ही असली दुनिया समझता है। अगर हमें अपने शरीर तथा विचारों को स्वस्थ रखना है तो प्रकृति की गोद में ज्यादा से ज्यादा समय बिताएँ, उसके साथ तारतम्य जोड़ें ताकि हमारी शुद्ध तरंगें उसे और उसकी श्रेष्ठ तरंगें हमें झंकृत करें। हमारा मन पवित्र विचारों की धारा में इस तरह प्रवाहित हो जो भीतर से आवाज़ आये कि यह

प्रकृति कितनी विशाल है, कितनी सुंदर है, कितने नि:स्वार्थ भाव से मानव की सेवा सदियों से करती आ रही है, यह सदा देती ही रहती है। इसमें संतुष्टता कितनी है! गर्मी-सर्दी में आबू की पहाड़ियों की झाड़ियाँ एकदम सूख जाती हैं मगर एक बारिश पड़ते ही पूरा जंगल हरियाली से लहलहा उठता है। कितनी संतुष्टता है इन पेड़ों में! एक बरसात से ही संतुष्ट होकर फल-फूल और ठंडी छांव देने लगते हैं परन्तु मनुष्य जितना ज़्यादा पाता जाता है, उतनी उसकी संतुष्टता घटती जाती है, पाने की प्यास बुझती ही नहीं मानो उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य पूरी दुनिया को अपनी मुट्ठी में करने का हो गया हो।

जब भी हम प्रकृति के करीब होते हैं तो अपने स्वरूप (आत्म-स्वरूप) को पहचानने में सहायता मिलती है, शांत मन प्रकृति की उदारता का बोध करवाता है। मन में प्रश्न उठता है कि जिसकी रचना इतनी सुंदर, वह रचयिता कितना सुंदर होगा! यहीं से शुरूआत होती है, आत्म-बोध और परमात्म-बोध की। **जब प्रकृति, पुरुष (आत्मा) और परमात्मा के प्रति विचार मन में कलोलें मारते हैं तो सकल ब्रह्मांड अपना घर महसूस होता है। उस परमात्मा की याद आत्मा को इतना आनन्दित, प्रफुल्लित कर देती है कि आत्मा से पवित्रता के प्रकंपन निकलने लगते हैं और प्रकृति के पाँचों तत्वों को पावन करने लगते हैं। पावन प्रकृति हमारी सेवा करती है और शरीर के पाँच तत्व भी पवित्र होते जाते हैं। शरीर, प्रकृति के तत्व तथा आत्मा भी जहाँ पावन होते, उसे देवी-देवताओं की सतयुगी दुनिया कहा जाता है।**

अगर हम सच में सुखी होना चाहते हैं, रामराज्य लाना चाहते हैं तो हमें विचारों को महान बनाना ही है। देने की भावना को जागृत करना और प्रकृति से सीखना ही है। जिस तरह मछली के लिये पानी ही उसकी दुनिया होती है, पानी से अलग होते ही कुछ

ही समय में वह मर जाती है, उसी तरह, हमें भी अपनी दुनिया यानि अपने घर में ही रहने की आदत डालनी होगी। **हमारा घर परमधाम है, हमारी असली जिंदगी आत्मिक स्वरूप में स्थित रहने में है। जैसे ही हम संसार के आकर्षण में आते हैं, मानो हम अपनी दुनिया से बाहर आ जाते हैं और जिस तरह मछली तड़पती है पानी के बिना, हम आत्मायें भी दुखी हो जाती हैं। मछली अपना भोजन लेने के लिये एक सेकंड पानी से बाहर आती और फिर वापस पानी में ही चली जाती है। पानी की लहरों में लहराती हुई मौज में रहती है, जब मन करता है, गहराई में चली जाती है। अगर हम भी अपने उदर-पोषण हेतु दुनिया में रहें और जैसे ही उससे निवृत्त होवें, अपनी आत्मिक दुनिया में चले जायें और परमात्मा की गोद में जाकर बैठ जायें तो वह अवस्था सब अवस्थाओं से ऊँची है। राजा-महाराजा की स्थिति भी उस स्थिति के सामने कुछ भी नहीं है।**

सारांश में हम यही कहना चाहेंगे कि हे आत्माओ, अब समय आ गया है उस घर में लौटने का जहाँ शांति ही शांति है लेकिन तैयारी तो अभी से ही करनी होगी। इसके लिए पहले प्रकृति के करीब, फिर पुरुष के करीब और फिर परमात्मा के करीब जायें। परमात्मा से शक्ति लेकर मास्टर दाता बन सारे विश्व की आत्माओं को भी दिव्य आनन्द और अतींद्रिय सुख का अनुभव करायें। तो आइये, चलें प्रकृति और परमात्मा की गोद में। ❖

परमात्म वरदानों से होली

ब्रह्माकुमारी राजकुमारी, मजलिस पार्क (दिल्ली)

परमात्म वरदान वर्ष है यह, भर लो वरदानों से झोली
आओ पहनें रूहे हर्ष इस वर्ष, अरे पिछली तो हो-ली सो होली

इक वरदान पावनता का, चमके भाल पे आत्मस्मृति की रोली
क्यूँ ढूँढ़े इत-उत? सुख-शान्ति तो खुद ब खुद संग होगी
रंग सत्य ज्ञानामृत के लगेंगे बरसने बरसाने,
शिव बाप खुद आप लगे खिलाने, दिलखुश टोली
है उठने वाली जहां से भय-आतंक-भ्रष्टाचार की डोली
मैं आत्मा, तू आत्मा भ्रातृत्व में करें रमण, बनें हमजोली,
परमात्म वरदान ....

आएँ तूफाँ कितने भी, तू फाँ न होना, पकड़े रख याद की डोरी
हम रूहे गुलाब, उड़ाएँ गुलाल, न हों भ्रमित, रहें सदा हरित
भस्माएँ विकर्म, झूलें अतीन्द्रिय सुख, पवित्रता की चुनरी ओढ़ी
भरमाए न कोई साधन, मैं तो लवलीन साधना में हो ली
परमात्म वरदान ....

चले न इसमें माया की कोई बरज़ोरी, न रहे मेरी कोई कमज़ोरी
प्रीत शिव बाप संग जोड़ी, समझ ले आत्मा मोरी
आओ मिलाएँ संस्कार, करें मिलाप, हो आंतरिक रास
गोपी हर आत्मा, गोपी वल्लभ के संग हो ली
परमात्म वरदान ....

कर सकेंगे क्या बाहर के युद्ध, जब अन्तर्युद्ध से मुक्त मैं हो ली
हुआ आध्यात्मिकीकरण, देहाभिमान ले शरण, बने हंसों की टोली
छँटेंगे बादल काले, झाँके स्वर्णिम भोर, आत्मविभोर हो ली
संजोयी शुद्ध सोच, शुद्ध कर्मों की, लगा दी जीवन की बोली
परमात्म वरदान ....